A-PDF Image To PDF Demo. Purchase from www.A-PDF.com to remove the watermark

विषय सूची

सितम्बर, सन १९४४

कुछ अव्यर्थ औषधियाँ

बैरोनो

स्त्रियों के मासिक सम्बन्धी कष्टों, रुके हुये मासिक तथा रक्त प्रदर की उत्तम औषधि। मूल्य ३।)

अस्थमोलीन

पुरानी से पुरानी खाँसी, दमा, सांस का फूलना आदि रोगों की शर्तिया दवा। मूल्य ३)

विटा-वाइब्रोलीन

गर्भावस्था सम्बन्धी कष्टों, असमय में गर्भ नष्ट होने से बचाने की एक मात्र दवा। मूल्य ५।) डाक खर्च अलावा मूल्य।

विक्रेता :—

भारती मेडिकल हाल

गान्धीनगर (नं० ५४) कानपुर

अलकपरी

केशों में प्रतिमास ३-४ इञ्च वृद्धि !

६ महीने में एड़ी चुम्बी केश !

'अलकपरी' का कोर्स

पहले सप्ताह में रूसी-खुश्की दूर हो जाती है।
दूसरे सप्ताह में केशों का झड़ना और उनके सिरों का फटना रुकता है।
तीसरे सप्ताह में नए केश उगते दिखाई देते हैं।
चौथे सप्ताह के अन्त तक केश ३-४ इञ्च बढ़ जाते हैं।
फिर प्रति मास इसी औसत से बढ़ते रहते हैं।

६ महीने में केश एड़ी-चुम्बी बन जाते हैं।

मूल्य एक शीशी का २॥) है जो एक महीने को काफ़ी होती है। डाक खर्च व पैकिङ्ग पृथक्। ३ शीशियों से अधिक डाक से नहीं भेजी जायँगी। अधिक के लिये ५) पेशगी भेजिए और अपने रेलवे स्टेशन का नाम लिखिये।

पता—'अलकपरी' नया कटरा इलाहाबाद

भारतीय स्त्रियों और कन्याओं की सबसे अच्छी और सबसे सस्ती सचित्र मासिक पत्रिका

बिहार, बीकानेर, जोधपुर, कोटा, ग्वालियर, यू० पी० की सरकारों द्वारा कन्या-शालाओं के लिये स्वीकृत।

वर्ष ५ | इलाहाबाद, सितम्बर १९४४ | संख्या ९

जागरण-गीत

लेखिका, कुमारी "शैल" रस्तोगी

जला दीप मेरा, सजे प्राण मेरे।
जगे चिर युगों के थकित गान मेरे।
तरुण सो रहा था जगाती तृषा थी,
अरुण सो रहा था जगाती उषा थी,
बुझे थे अँगारे जगाता पवन था।
बुझे स्वर्ण-तारे जगाता गगन था।
जगा अंशुमाली, सबेरे सबेरे।
जगे चिर युगों के थकित गान मेरे।
उदधि जग रहा है, तरंगें जगी हैं।
कली के हृदय की उमंगें जगी हैं।
जगी कोकिला गीत गा गा जगाती।
प्रकृति-प्रेरणा को सुधा-रस पिलाती।
खड़ी द्वार जागृति मुझे आज घेरे।
जगे चिर युगों के थकित गान मेरे।
सरों निर्झरों में जगा जागरण नव,
बँधी बीचियों पर चढ़ा आवरण नव,
चमकती चली चेतना की किरण नव।
पुनः बन गया आज जीवन मरण-भव।
जगा जग अखिल तुम जगो देश मेरे।
जगे फिर युगों के थकित गान मेरे।
विहँस देव-पथ पर विकलता बिछाती।
तड़ित (व्योम-बाला) बढ़ी आज आती।
लुटाती हृदय-धन लिये एक आशा।
जगेगी कभी तो मलिन मौन भाषा।
जगा शशि, जगे यामिनी के बसेरे।
जगे चिर युगों के थकित गान मेरे।
जगी आज मैं हूँ, जगा देश मेरा।
जगा सुप्त जीवन, जगा वेश मेरा।
अनिल जागता है, जगी है अनल भी
जगी वेदना है जगा बाहुबल भी।
जगो आज तुम भी, तरुण देश मेरे।
जगे चिर युगों के थकित गान मेरे।

पति कैसा हो ?

लेखिका, श्रीमती प्रतिमा शिरूरकर

हम आदर्शपति उसे ही कह सकते हैं जो स्त्री के सभी दुख-सुख का ख्याल रखता हो। उसे समुचित सब प्रकार की सुविधा, आराम, और अधिकार दे। सबसे बड़ी बात तो यह कि वह हृदयहीन न हो, सूखा और नीरस स्वभाव न हो। भावना शून्य न हो। बात को समझने, परखने, उस पर विचार विनिमय करने की जिसमें बुद्धि हो, जो जीवन के हर पहलू को मनोयोग पूर्वक, मनोरंजन, समवेदना से पूर्ण रक्खे।

स्त्री के प्रति उसके हृदय में प्रेम, सहानुभूति, आदर और मान हो। कर्तव्य का पूरा ज्ञान हो! पत्नी के सुख में, हँसी-खुशी में हँसी खुशी से शरीक हो। स्त्री की कठिनाइयों, घर गृहस्थी के झगड़ों, घरेलू टीमटाम, गृह व्यवस्थाओं को शान्ति के साथ हास्य पूर्वक सरलता से हल करता हो।

मीठी कर्णप्रिय बोली, मधुर भाषण, वाक पटुता, हाजिर जवाबी बातचीत करने का ढङ्ग मिलन सार हँसमुख और भावुक हो। विशाल हृदय दयावान शिक्षित और अक्लमंद हो। सदाचारी संयमी संस्कृत-सभ्य हो। जिसके दिमाग में उच्च विचार हों सकीर्ण हृदय और संकुचित विचारोंवाला न हो। जो स्त्री के स्वास्थ्य की परवाह और रक्षा करता हो। उसकी शारीरिक सुन्दरता, यौवन, शृङ्गार-शौक के विषय में पूर्ण सतर्क हो। जो उसकी सब सद्-इच्छाओं को पूरा करे। जो उसे केवल भोग-वासना की चीज ही न समझता हो। जो उसे पैर की जूती और जूती की धूल न समझता हो। जो औरत को पशु न कहता हो। जो यह न कहे कि औरत को आराम सुख सुविधा की क्या जरूरत है। औरत पशु है, 'ढोल गँवार शूद्र पशु नारी, यह सब ताड़न के अधिकारी' यह सब कह कर स्त्री की निन्दा और अपमान करके उसके कोमल और भावुक हृदय को चोट न पहुँचाता हो।

जिसकी प्रेम पूर्ण मुस्कराहट प्रेम पूर्ण मधुर दृष्टि और स्नेह पूर्ण भद्र व्यवहार से घर बाहर सब खुश रहें। जो नारी को पत्नी बना कर नारीत्व का उपहास न करे। जो उसे शिक्षा दे, हर पहलू को समझा दे, उसकी रुचि के अनुकूल जो कुछ भी वह कर सकती है और शौक रखती है करने में आगे बढ़ावे। हर क्षेत्र में हर हालत में सहायक हो, जो उसकी कला, प्रतिभा का विकास करे, उसे नष्ट न होने दे, जो उसकी प्रवृति को पहचानता हो। जिसके हृदय में उल्लास, उत्साह, साहस और नई जागृति नई प्रेरणायें हों। जो चंचल, रसिक, खुश मिजाज हो, जिसमें आकर्षण शक्ति हो, कलाकार हो। जो हँसने हँसाने वाला, गायन वादन, नृत्य, गीत मे शौक रखता हो। जिसे कविता से रुचि हो, साहित्यिक हो। जिसका हृदय पत्थर न हो। जड़ न हो, जो कभी भूलों को भी हँस कर सह ले, जिसकी झिड़की में कभी प्यार भी हो। जिसकी ताड़ना में भी अपनापन हो। जो मानवता के नाते सभ्यता के नाते, किसी की भावनाओं और इच्छाओं को ठेस न पहुँचाये। जो अपने शिष्ट और कुशल व्यवहार से सबको खुश करने का तरीका जानता हो। जो एक रस न हो, जिन्दगी को जिन्दगी समझता हो उसे मशीन गाड़ी और कारखाना ही बना डाले। जो वर्तमान से, अमूल्य अवसरों से लाभ उठा लेना जानता हो। जो क्रोधी न हो, जल्दबाज न हो, कुंद न हो, झूठा और वायदा-खिलाफ न हो, जो शृङ्गार और वेश भूषा का शौकीन हो, समझदार हो, जो पत्नी के लिये एक प्रेमी नायक की ही तरह बना रहे, उपहार, भेंट दाम्पत्य जीवन का रहस्य जानता हो।

जो पत्नी की खूबियों का बखान करे। उसका उत्साह और उछाह न भंग करे। जो यह समझ कर चुप रह जाने या यह कहने की भूल न करे कि यह तो स्वाभाविक है। यह तो चाहिये ही। यह तो होता ही रहता है। जो हमेशा यह याद रक्खे कि प्रशंसा, खुशामद और बढ़ावा स्त्री के लिये वैसा ही जरूरी है जैसा कि जीवन के लिये स्वांस है।

जो अपनी बहादुरी और बड़प्पन स्त्री को पैर की जूती कहने में, उसका कोई अस्तित्व ही नहीं समझने में, पशु कहने में न समझता हो. जो स्त्री को रोती देख कर बजाय उसके आँसू पोंछने के कर्कश स्वर में कटु तीखे बोलों से रुलाता न हो। जो यह याद रखता हो कि पति उतना और किसी बात से स्त्री के निगाहों में नहीं गिरता जितना अपने असभ्य बर्ताव और रूखे नीरस स्वभाव से, शुष्क व्यवहार से। जिसमें पत्नी के लिये निर्दयता, अवहेलना, स्वार्थ लापरवाही, उपेक्षा, बेरुखी बेदिली बेरहमी बेवफाई बेतमीजी व बेवकूफी न हो। बीबी बच्चों से जिसे दिली मुहब्बत हो।

जो स्त्री के कभी बीमार पड़ने पर उसकी सेवा परिचर्या तन मन से करता हो। जो स्त्री के भी दिल, दिमाग, शरीर, भाव और विचार समझे, उसकी भी भूख, प्यास, दर्द, तकलीफ जाने। जो उसे घूमने-फिरने मिलने-जुलने का मौका दे। जो स्त्री से कोई छिपाव दुख न रक्खे। रुपये पैसे वस्त्र-भूषण और हर एक आवश्यक वस्तुओं से उसके तन-मन को भरा पूरा रक्खे। जिसे लोकाचार शिष्टाचार सांसारिक व्यवहार-बर्ताव की बात-चीत अच्छी तरह आती हो जो अपने दायित्व को समझता हो। जो अपने मित्रों से मेल जोल और आमदरफ्त कायम रक्खे। उन्हें कभी कभी चाय पानी का निमंत्रण देता हो, बात चीत करने में कुशल हो। जो साहित्यिक बात चीत कर सके, राजनीतिक वाद विवाद कर सके, देश, समाज, शिक्षा और हर विषय पर बोल सके तर्क मुबाहसा कर सके। जो धारा प्रवाह रूप से बोल सकता हो। जो बात बात में झगड़ा तकरार न करे, क्रोध में आपे से बाहर न हो जाय छोटी-मोटी बातों में न पड़ा रहे। जो सदा मौका, स्थिति, समय और स्थान काल अवस्था देख कर करता हो। और जो नारी का महत्व, उसका त्याग, उसकी सहनशीलता जानता हो। जो अदब कायदा खिलाने-पिलाने की कला जानता हो। जो सरस प्रेम करना जानता हो। शुष्क प्रेम न करता हो। जो स्त्री को देवी, शक्ति, विभूति, सृष्टिकर्त्री, जननी और पूज्य समझ कर हृदय से आदर और प्रेम के भाव रक्खे और जीवन-पर्यन्त हर काम मिल जुल कर, करते हुये सच्चा हितैषी, शुभचिन्तक, रक्षक, सहायक, प्रेमी बना रहे। वही आदर्श पति है, वही सफल पति है, वही लायक पति है।

कब होगा ?

लेखक, श्री 'अकेला'

कब होगा अन्त लड़ाई का
 कोई बतलाना कब होगा ?
गाँधी से मिस्टर जिन्ना का
 फिर हाथ मिलाना कब होगा ?
है मुसोलिनी मर रहा और
 हिटलर पग-पग पर हार रहा,
यदि आज नहीं तो टर्की का
 मैदान में आना कब होगा ?
सैमुअल होर की बीबी का
 अपमान हुआ है मैड्रिड में,
इस खता के लिये फ्रैंको का
 रोना पछताना कब होगा ?
मैडम चाङ्काई शेक गई
 अमरीका में मन बहलाने,
हम सोच रहे हैं चुंकिङ्ग को
 अब उनका आना कब होगा ?
विधि वाम हुआ जापानी पर
 आसाम नहीं वह ले पाया,
इम्फाल हुआ जंजाल सिद्ध
 रंगून से जाना कब होगा ?
जिन्ना को पाकिस्तान मिलेगा
 सिख भी लेंगे सिकिस्तान,
जनखों का जनखिस्तान के लिये
 अब चिल्लाना कब होगा ?
सुनते हैं डालमिया साहब
 इक और करेंगे ब्याह नया,
अब सरस्वती का शिमले से
 लखनऊ बसाना कब होगा ?
टण्डन जी आने वाले हैं
 यह सुन चौबे-दल चौंक उठा,
तम के इन बीर जुगनुओं का
 अब और ठिकाना कब होगा ?

एक सच्ची कहानी

प्रेम की शक्ति

लेखिका, "करुणा"

मैं ब्राह्मण की पुत्री थी। ऊँचे कुल में पैदा हुई थी। मुझे ऊँची शिक्षा दिलाई गई। मैं विलायत मे पढ़ कर लौटी। जाति में कोई वर मेरे योग्य न समझा गया। अतएव विलायत से लौटे हुये एक गैर जाति के युवक के साथ मैं ब्याही गई। अदालत के सामने मेरा विवाह हुआ।

पहले कुछ दिन तो आनन्द से बीते। परन्तु बाद को मुझे अनुभव हुआ कि यह शादी करके मैंने भूल की है।

मेरे पति उन आदमियों में थे जो बाहरी लोगों को देवता प्रतीत होते हैं; परन्तु घर वालों के लिये राक्षस बन जाते हैं।

मेरी गोद में एक बच्चा आ गया था। उसके भविष्य का खयाल करके सब किस्म के अत्याचार सहती रही। इस प्रकार ९ वर्ष बीते। अन्त में जब सहा न गया तब मैंने अदालत में जाकर तलाक के लिये अर्ज़ी दी।

मेरे पति चाहते थे, मुझे तलाक न मिले। उन्होंने अच्छे अच्छे वकील किये। मेरी तरफ से भी खासे वकील थे। वे दिन याद आते हैं तो आज भी रोंगटे खड़े हो जाते हैं। एक समय तो ऐसा जान पड़ा कि मुझे तलाक न मिलेगा।

परन्तु मेरे लिये जो वकील न कर सके वह मेरे प्यारे बच्चे ने सिर्फ दो चार शब्दों में कर दिया।

मेरा गवाह केवल मेरा ९ वर्ष का बच्चा था।

मेरे पति ने जज को बहुत प्रभावित किया था। वे बहुत ही मधुरभाषी थे। उस समय पूरे देवता प्रतीत हो रहे थे। जज मुझी को अपराधिनी समझ रहा था।

पति का बयान हो चुकने पर मेरा पुत्र अदालत में लाया गया। जज ने उससे कई सवाल किये। एक सवाल यह था—'तुम अपने पिता का कहना मानते हो?'

बच्चे ने जवाब दिया—'हाँ, साहब।'

जज ने पूछा—'तुम पिता का कहना क्यों मानते हो? क्या इसलिये कि बेटे को बाप का कहना मानना चाहिये?'

बच्चा बोला—'मुझे पिता से डर लगता है। इसलिये उनका कहना मानना ही पड़ता है।'

जज ने फिर पूछा—'क्या तुम अपनी माँ का भी कहना मानते हो?'

बच्चा बोला—'हाँ।'

'क्या तुम माँ को भी डरते हो?' जज ने पूछा।

बच्चे ने उत्तर दिया—'माँ हमको प्यार करती है, इसलिये।'

मेरे बच्चे के इन चन्द शब्दों के बाद जज ने आगे बहस सुनना बेकार समझा। उसने मेरे पक्ष में फैसला दे दिया। मुझे तलाक मिल गया। और बच्चा भी मुझी को मिला।

इस घटना को आज ० वर्ष हो गये हैं। इस बीच में मैंने बहुत कष्ट सहे हैं। कभी कभी तो धीरज का बांध जैसे टूट गया हो, ऐसा प्रतीत हुआ है। परन्तु मेरे बच्चे के शब्द—'माँ हमको प्यार करती है।' बराबर मेरे कान में गूँजते रहे और मुझे बल प्रदान करते रहे।

इसी प्रेम के सहारे हम माँ और बेटा दोनों ने ये सङ्कट के दिन काट दिये। माँ के प्रेम में बड़ी शक्ति होती है।

कैसा छल

लेखिका, श्रीमती कुसुम कुमारी

नयनों में तुम समा रहे हो
यही सोच मैं निज मन में।
अपने इन रोते नयनों को
लगी देखने दर्पण में॥
किन्तु तुम्हारे बदले देखा
भरा निराशा का सागर।
हा! हा! कैसा छल करते हो
मुझसे मेरे नटनागर!

एक हास्य रस पूर्ण कहानी

मिस सलीमा

लेखक, कुँअर सुरेशसिंह

कहते हैं लखनऊ में नवाब वाजिदअली शाह जब बेगमों के लिये कैसर बाग की कोठियाँ बनवाने लगे थे तो उन्होंने कारीगरों को अपने कबूतर खाने का नक्शा दिखाया था--लेकिन कबूतर उड़ कर जब मटियाबुर्ज चला गया तो धीरे धीरे कबूतरियाँ भी उड़ गईं और उन काबुकों में रक्खे गये अवध के ताल्लुकदार जो सूबे के कन्हैया बटलर की मूर्ति को आज भी गोपियों की तरह घेरे हुये हैं।

इन्हीं पीली कोठियों के पूरब वाले सिरे पर एक जँगलेदार कोठरी में हमारे माँमू रहते हैं जो इस कहानी के चरित्र नायक हैं।

माँमू का नाम कुछ न कुछ तो उनके वालदैन ने जरूर ही रखा होगा लेकिन ५० वर्ष पहले की बात को आज बहुत कम लोग याद रख सके हैं और आज माँमू को उनके सभी यार दोस्त यहाँ तक कि उनके रिश्तेदार तक 'माँमू' कह कर ही पुकारते हैं।

माँमू ताल्लुकदार वंश के एक होनहार हीरे थे जो ठीक से तराशे न जाने के कारण आज कंकड़ के मोल भी नहीं बिक रहे थे लेकिन जो लोग उनको करीब से जानते हैं वे और कुछ चाहे जानें इतना तो महसूस ही करते थे कि माँमू इस जन्म में न सही तो अगले जन्म में कुछ न कुछ जरूर कर दिखावेंगे।

इस जन्म में भी उनके लिये कोशिश न हुई हो, सो बात नहीं—जैसा कि रईसों का कायदा है, माँमू को पढ़ाने लिखाने का सब सामान मुहैया किया गया लेकिन जैसा रईसों के लड़के करते हैं माँमू ने भी वही किया और पढ़ने से ऐसी कसम खाई कि आखिर तक न पढ़ा तो न पढ़ा। तीतर बटेर, भेड़ और भेड़ जैसा आँख माँमू ने खूब लड़ाईं और इन्हीं सब में उनकी जिन्दगी के ३० ३५ साल बीत गये।

आगे चल कर हालाँ कि सब की आँखें एक दिन खुलती हैं लेकिन माँमू की आँख इसी ३५ साल की छोटी उम्र में ही खुली और वे इसी खेलने खाने की उम्र में ही एकाएक लखनऊ जाने को तैयार हो गये।

माँमू लखनऊ कुछ घूमने की गरज से नहीं जा रहे थे बल्कि कुछ जरूरत ही ऐसी आ पड़ी थी कि वे वहाँ जाने के लिये मजबूर हो गये थे। बात यह थी कि वे जिस रियासत के पट्टीदार थे वह कर्ज के इल्लत में एक अरसे से कोरट थी। वहाँ के नवाब तीसरोजा जब तीस की दिन में कई लाख का कर्ज करके न जाने कहाँ चले गये तो रियासत को कोर्ट आफ वार्डस ने अपने इन्तजाम में ले लिया, जिससे जो कुछ कमी बाकी रह गई हो वह भी पूरी हो जावे। सब पट्टीदारों को थोड़ी थोड़ी रकम गुजारे के तौर पर बाँध दी गई और वे लोग शगीफे के बीज की तरह इधर के उधर हो गये। माँमू को भी आँसू पोंछने के लिये थोड़ा सा गुजारा मिला लेकिन वह इतना कम था कि उनका काम घर के पुराने जेवरों के बेचने के बगैर चलता ही न था। किसी तरह इन जेवरों के सहारे इतने दिन काटे गये लेकिन जब एक एक करके वे भी साथ छोड़ कर चले गये तब जाकर कहीं माँमू की आँख खुली।

आँख खुलने पर माँमू ने देखा कि दुनियाँ गोल है और वहाँ बिना अँग्रेजी जाने सब कुछ झोल है। उन्होंने अपनी आत्मा की पुकार सुनी और यह तै किया कि जैसे भी होगा अँग्रेजी सीखूँगा, अँग्रेजी बोलूँगा और अँग्रेजी में ही दरखास्त लिख कर बोर्ड साहब से अपना गुजारा बढ़वाऊँगा।

लेकिन यह सब होते हुये भी माँमू चाहते यह थे कि वे अँग्रेजी सीख भी जावे और किसी को कानों कान खबर न हो। वे इस राज को किसी पर जाहिर नहीं होने देना चाहते थे।

वैसे तो वे अगर चाहते तो घर पर ही अँग्रेजी पढ़ सकते थे लेकिन उम्र कुछ इस मंजिल तक पहुँच गई थी कि पढ़ाई छोड़ने के बीस साल बाद अब फिर से उस गड़े मुरदे को

उखाड़ने में उन्हें बड़ी झिझक लगती थी। यही वजह थी कि वे घर से दवा कराने का बहाना करके लखनऊ जा रहे थे।

माँमू ने सोचा था कि लखनऊ में बड़े मजे रहेंगे। वहाँ जान पहचान के ज्यादा लोग तो हैं नहीं जहाँ चाहेंगे घूमने चल देंगे और फिर जो मिलेगा उससे अँग्रेजी में बात करेंगे। दूकानदार, ताँगेवाले, रास्ता चलने वाले जो भी सामने पड़ेगा और जिससे भी मौका मिलेगा उससे बस अँग्रेजी में ही गुफ्तगू की जावेगी। लेकिन लखनऊ पहुँचने पर उन्हें मालूम हुआ कि दिल्ली दूर है और वहाँ पहुँचने में उन्हें इस चूहेदान में काफी दिन बिताने पड़ेंगे।

लेकिन माँमू जल्द हार मानने वाले असामी न थे। वे अपने को उस मोगलिया खान्दान का वंशज लगाते थे जिसने भारत में आने का रास्ता ढूढ़ लिया था फिर भला एक मामूली सी भाषा सीखने का मार्ग खोजना माँमू के लिये कौन सी मुश्किल बात थी। उन्हें बचपन ही से 'यस' और 'नो' ये दो शब्द मालूम थे उन्होंने सोचा तब तक इन्हीं से काम चलाया जावे।

यही तै करके माँमू लखनऊ में जम कर रहने लगे। एक छोटा सा जंगलेदार कमरा मिला तो इसी पर कनात कर गये। सफाई पसन्द आदमी थे कुछ दिन तो उन्हें अपने कमरे की सफाई और सामान वगैरह ठीक करने में लगे फिर उससे फ़ुरसत मिली तो एक दिन बनसँवर कर घसियारी मण्डी की ओर शाम को टहलने निकल पड़े।

इतने दिन जो वक्त खराब हुआ था उसका माँमू को बहुत अफसोस था और आज वे यही तै करके बाहर निकले थे कि बस अब आज ही से अँग्रेजी बोलना शुरू कर देंगे। घर से निकल कर वे कुछ ही दूर गये होंगे कि उनको अपने 'यस' और 'नो' के इस्तेमाल करने की उतावली ने घेर लिया वे इधर उधर देखते जा रहे थे कि किस पर इन तीरों का वार किया जावे कि सामने के मोड़ पर मोटर की बड़ी कर्कश पों पों सुनाई पड़ी। वे चौंके तो पीछे से ताँगे वाले ने ललकारा, घबरा कर एक बगल हट गये, कलेजा धक् धक्, धक् धक्, करने लगा न मुँह से 'यस' ही निकला न 'नो' ही—जान बच गई यही क्या कम था। दिल मसोस कर घर लौट आये—पहला दिन इस तरह बेकार गया—दो चार दिन माँमू ने और इसी कोशिश में लगा दिये, वे लगन के आदमी थे और फिर बदकिस्मती भी तो किसी शरीफ आदमी के पीछे हाथ धोकर नहीं पड़ती—माँमू को भी उसने शिकायत का मौका न दिया और वे धीरे धीरे अपने मुहल्ले में 'यस' 'नो' का इस्तेमाल बखूबी करने लगे।

लेकिन आखिर ये दोनों लब्ज माँमू का कहाँ तक साथ देते—माँमू को उन्हीं को बार बार दुहराते दुहराते अजीरन सा हो गया—उन्होंने सोचा कि कुछ और सीखे बगैर काम नहीं चलेगा क्योंकि इन दो शब्दों से कुछ काम भले ही निकल जाता हो लेकिन तबियत जो नहीं भरती। मजबूरन उन्होंने धीरे धीरे उन लोगों से रब्त जब्त बढ़ानी शुरू की जो ज्यादातर अँग्रेजी में ही बातें करते हों। उनकी जबान से फर्राटे की अँग्रेजी सुन कर माँमू मुग्ध होकर एक टक उन्हीं के मुँह की ओर ताकते रह जाते—फिर उनमें से दो चार सीधे सादे लब्ज जो उन्हें घर पहुँचने तक याद रह जाते उनका मतलब समझे बगैर ही वे उनको मन ही मन घोखा करते। घर में कोई बड़ा आईना तो था नहीं इससे वे हजामत बनाने का छोटा शीशा एक हाथ में ले लेते और कमरे का दर्वाजा बन्द करके एक कोने में जा खड़े होते। फिर शीशे में अपनी शक्ल देख देख कर उन्हीं लब्जों को घण्टों दुहराते और थक जाने पर खाना खाकर सो जाते। यही उनकी उन दिनों की दिनचर्या थी।

कुछ दिन इस तरह भी माँमू ने गुजारे लेकिन इससे भी उन्हें ज्यादा फायदा न हुआ क्योंकि अँग्रेजी बोलनेवाले दूकानदार और मुहल्ले वाले धीरे धीरे यह जान गये थे कि माँमू अँगरेजी नहीं जानते—इससे वे अब इनसे हिन्दुस्तानी में ही बोलते। लाचार माँमू को अब ऐसी मित्र मण्डली तलाश करनी पड़ी जहाँ सिवा अँगरेजी के और कोई बोली, बोली ही न जाती हो—और 'जिन खोज़ा तिन पाइयाँ गहरे पानी पैठ" के अनुसार माँमू को शीघ्र ही वह जगह भी मिल गई।

घूमते फिरते माँमू एक दिन गोरों की छावनी की ओर चले गये—वहाँ जो नज्जारा उन्होंने देखा उससे उनकी बाहें खिल उठीं—ढेर के ढेर लाल-लाल गोरे चारो ओर बीर-बहूटी की तरह मैदानों में फैले थे—कोई इधर चला

आ रहा था तो कोई उधर। कुछ फुटबाल खेल रहे थे तो कुछ बारिकों के दालानों में बैठे आपस में वही गिटपिट भाषा उड़ा रहे थे जिसके लिये माँमू इस कदर बेकरार थे। एक गोरा सीटी बजाता हुआ और बेंत से अपना जूता पीटता हुआ माँमू के बगल से निकला – इन्हें भौंचका देख कर उसने पूँछा—'मंकी ?'

माँमू का गला कुछ फँस गया था – खखार कर बोले, "यस"

वह वहुत हँसा बोला, "जू जाने मांगटा ?"

माँमू ने छूटते ही कहा, "नो"

उसे माँमू की हाजिर जवाबी बहुत पसंद आ गई और उसी वक्त से उसने माँमू से दोस्ती कर ली। माँमू को भला क्या उज्र होता "अंधा चाहे दो आँख"– माँमू तो यह चाहते ही थे। उस दिन से रोज शाम को बिला नागा वे छावनी पहुँच जाते और गोरे से दिल खोल कर बातें करते। इस दोस्ती को थोड़ा ही अरसा गुजरा कि उन्हें यह महसूस होने लगा कि वे अँग्रेजी बोल तो नहीं लेकिन समझ लेने लगे हैं। फिर जब एक चीज समझ में आ गई तो उसे जबान से कह देने में कितनी देर लगती है।

एक दिन छावनी से घर लौट कर वे अपने जेबी शीशे में अपनी शक्ल देख देख कर बहुत देर तक अँग्रेजी बोलते रहे—जब थक गए थे तो उन्होंने बड़े गर्व से मुस्कुराकर शीशे को मेज पर रख दिया। अब देर करना फिजूल था उन्होंने तै किया कि वे जल्द से जल्द अफसरों से मिलकर अपना मामला तै करा लेंगे। वे कल्पना करने लगे कि जब बड़े साहब का हुक्म लेकर वे अपने जिले के कोटर के मैनेजर के पास पहुँचेंगे और उससे अँग्रेजी में आँधी सी झोंक देंगे तो वह कैसे अचम्भे में पड़ जावेगा। उसका चेहरा उस वक्त देखने काबिल होगा। तब हजरत को पता चलेगा कि "यह वह गुड़ नहीं है जिसे चींटे खा जाते हैं" यहाँ तो उस खान्दाने मुगलिया का खून रगों में बह रहा है जिसके शेरों ने बड़ी बड़ी सलतनत चलाई हैं—एक सड़ी सी बन्दरों की जबान सीखने में भला कितनी देर लगती है।

माँमू का हौसला अब बहुत बढ़ गया था—उन्होंने अपनी सारी स्कीम अपने यार दोस्तों को बता दी। लेकिन उनके साथियों ने उन्हें जल्दबाजी करने से टोका और उन्हें सलाह दी कि पहले वे अपने नाम के "विजटिंग कार्ड छपवा लें तब साहब से मिलें—कार्ड भेज कर मिलने का मजा ही दूसरा होता है।

माँमू जिद्दी नहीं थे दोस्तों की यह राय उन्हें जँच गई। दो चार दिन में हर्ज ही क्या हो जावेगा। वे अपने मित्रों की मदद से कार्ड छपाने की फिक्र में पड़े। कार्ड छपने में भला क्या दिक्कत होती। एक हफ्ते के भीतर वे भी छप कर आ गए और माँमू की एक मंजिल और पार हो गई।

कुछ दिनों तक तो माँमू अपने कार्डों पर इस कदर दीवाने रह कि साहब के यहाँ जाने का जैसे उन्हें ख्याल ही न रह गया। वे जब तक अपने मुहल्ले भर के सभी बड़े लोगों के यहाँ कार्ड भिजवा कर मिल न चुके तब तक उनके सर का भूत न उतरा। जब मुहल्ले में सिर्फ वे ही लोग बच रहे जो शाम को मकान के बाहर को अकेले कुरसी डाले बैठे रहते हैं या दिन को बाहर से पुकारे जाने पर खुद ही सुनने के लिए चले आते हैं तब माँमू जाकर कहीं रुके—जिससे मिलने गए हैं जब वहीं घर के बाहर आ जाता है तो भला उसे कैसे कार्ड दिया जावे।

इस काम से निपटने पर माँमू को अपने गुरें की याद आई। बहुत दिनों से उससे भेंट नहीं हुई थी—वे छावनी की ओर चल पड़े। गुर्रा मिला तो लेकिन बहुत खिंचा खिंचा सा। उसने माँमू की ओर बड़ी संदेह की दृष्टि से देखते हुए अँग्रेजी में पूछा, "तुम यहाँ से हमारी घड़ी उठा ले गया है ?"

माँमू ने अपना वही पेटेंट उत्तर दिया "यस"

गुरें ने फिर टूटी फूटी गुर्राशाही अँग्रेजी में पूछा "कहाँ है वह घड़ी ? मुझको दो।" माँमू ने कहा "नो"।

गुरें ने गुस्से कहा "यहाँ चोरी करने आता था ?"

माँमू बोले "यस"। अब तो उसने माँमू को डाँट कर कहा "हमारी घड़ी नहीं देगा ?"

माँमू ने फिर कहा "नो"

इसके बाद गुरें को भला कहाँ ताब रहती—उसने लपक कर माँमू का कालर पकड़ा और उन्हें झकझोरते हुए अँग्रेजी में बार बार यही पूछना शुरू किया "घड़ी नहीं देगा ?" "घड़ी नहीं देगा।" "घड़ी नहीं देगा ?" माँमू हर झटके पर एक बार कहते "यस" और दूसरी बार कहते

"नो" । यहाँ तक कि उस डूश को भी यह समझने में देर न लगी कि उनके जिगरी दोस्त साहब उनकी मदरटङ्ग के नाम पर सिवा "यस" और "नो" के और कुछ नहीं जानते । उसने आजिज आकर उन्हें छोड़ दिया । छूटते ही माँमू वहाँ से ऐसे उड़न छू हुए कि फिर उस ओर कभी झाँकने न गए ।

इस घटना से माँमू कुछ सहम जरूर गए लेकिन वे पस्तहिम्मत नहीं हुए । गुरें तो जंगली होते ही हैं । जान पड़ता है शराब ज्यादा पी गया था—तभी तो न जाने क्या गिटपिट गिटपिट करके बुलडाग सा टूट पड़ा—खैरियत हुई कि कोई जान पहचानवाला वहाँ नहीं था । लेकिन बड़े बड़े आला अफसर ऐसे थोड़े ही होते हैं । वे ऊँचे खान्दान से आते हैं—हाथ तक मिलाते हैं तो बड़े करीने से । आपके हाथ में अपना हाथ ऐसी मुलायमियत से दे देंगे कि जब तक चाहिए लिए रहिए । इन गोरों की तरह हाथ झकझोर नहीं डालते । उनकी बात ही कुछ दूसरी होती है । यही सब सोच कर माँमू ने अपने दिल को तसल्ली दिया और जल्द से जल्द साहब से मिलने की तैयारी करने लगे ।

पहले माँमू ने अपनी पोशाक सँभाली । सफेद गुरगाबी जूते पर खड़िया पोती गई—उसने बड़ी सफाई से फटे हुए मोजों को अपने हृदय में छिपा लिया । छालटीन के कम पायचे के घुटन्ने पर के पान के दाग जब धोबी के यहाँ भी न छूट सके तो उन पर खड़िया घिस कर उन्हें छिपाने की कोशिश की गई । फिर जालीदार बनियाइन पहन कर ऊपर से चुना हुआ तंजेब का कुरता पहना गया । अचकनों की खोज में काफी वक्त लगा । जिनके बंद टूट गए थे उनमें बंद लगे जिनकी बटन टूट गई थी उनमें बटन टांकी गई । फिर जब उनके पहनने की पारी आई तो उनमें से आधी से ज्यादा ने एकदम इस्तीफा दे दिया । माँमू बड़ी परेशानी में पड़े । जो अच्छी अच्छी अचकनें थीं वे ऐन वक्त पर धोखा दे गईं । क्या सब रखे रखे सिकुड़ गई या बनियाइन इतनी मोटी है कि अचकनों का हक मारना चाहती है । बनियाइन उतारकर बहुत खींच खाच कर एक को पहना तो बटन लगाते ही उसके सब काजों ने बेतरह मुँह फाड़ दिया । माँमू लाचार हो गये । खीझ कर अपनी रोजमर्रा की अचकन पहनी और साहब के बँगले की ओर चले ।

बँगले पर मिलनेवालों का एक हुजूम सा लगा था । माँमू ने मौका पाकर चपरासी को अपना कार्ड दे दिया और एक पेड़ के नीचे बैठ कर इन्तजार करने लगे ।

काफी देर इन्तजार करने के बाद कहीं जाकर माँमू की पारी आई । चपरासी ने दूर ही से इन्हें इशारे से बुलाया । माँमू पंजों के बल चलते हुए साहब के कमरे में दाखिल हुए और टोपी उतार बड़े अदब से झुक कर सलाम किया ।

साहब इनको देख कर पहले तो चौंके फिर काड की ओर देख कर हिन्दुस्तानी में बोले "यह कार्ड आप लाया है ?"

माँमू ने जवाब दिया "यस सर"

साहब ने कार्ड की ओर इशारा करके फिर हिन्दुस्तानी में ही पूछा "आप इनका कौन है ?"

मांमू इस प्रश्न से घबरा गए । एक तो उनकी समझ में इसका मतलब ही न आता था दूसरे उनका अँग्रेजी दूसरा शब्द "नो सर" साहब के इस सवालिया जुमले के बाद इस्तेमाल ही नहीं हो सकता था—वे इसी सोच में पड़े थे कि साहब फिर कहा "यह कार्ड जिसका है वह आपका कौन है ?"

मांमू अब और उलझन में पड़ गए लेकिन किसी न किसी तरह हिम्मत करके बोले—"यह कार्ड मेरा है"

साहब ने फिर हैरानी जाहिर करते हुए पूछा—"आपका ?"

मांमू ने उत्तर दिया "यस सर मेरा"

साहब ने कार्ड मांमू की ओर बढ़ाते हुए कहा—"इसमें तो मिस सलीमा लिखा है ।"

मिस सलीमा !!! मांमू यह नाम सुनते ही छटपटा उठे जैसे किसी ने उन्हें चाबुक मार दिया हो । उन्हें कुछ सूझ न पड़ा । मारे घबराहट के वे साहब के हाथ से कार्ड लेकर कमरे के बाहर निकल आए और ऐसे बगटुट घर की ओर भागे कि फिर न कभी उनको साहब के पास गुजारा बढ़वाने के लिए जाने की हिम्मत पड़ी, न अँग्रेजी सीखने की ।

रास्ते भर हर तरफ उन्हें अपने मुहल्ले की उस कलूटी नर्स "मिस सलीमा" की ही शकल दिखाई पड़ती थी जिसके घर से एक दिन वे उसका कार्ड उठा लाए थे ।

———

बदलती दुनिया से अपरिचित एक वृद्धा की कहानी

मिल

लेखिका, कुमारी सरला माथुर

छोटी सी कुटी में एक ओर चक्की रखी थी, एक ओर चर्खा। एक कोने में चूल्हा बना हुआ था, उसके पास ही एक मिट्टी की हँडिया रखी थी। मैली फटी हुई दरी के ऊपर बैठी हुई वृद्धा सूत की गठरी बाँध रही थी। उसके हाथ काँप रहे थे परन्तु मुख पर प्रसन्नता थी। तीन दिन के उपवास के उपरान्त आज उसे पेट भर भोजन पाने की आशा थी। गठरी सिर पर रख कर वह काँपते हुए पाँवों से चन्दू के झोंपड़े की ओर चली। द्वार बन्द देख कर उसने पुकारा "बेटा।"

द्वार खोल कर चन्दू की बहू सुखिया ने कहा आओ मां।

"चन्दू कहीं बाहर गया है?"

"हाँ।"

"कितनी देर में वापिस आवेगा?"

"वह तो शहर गए हुए हैं।"

"क्यों?" वृद्धा ने चौंक कर पूछा।

"अन्दर आओ ना मां।"

वृद्धा ने चटाई पर बैठते हुए फिर पूछा, "बहू! क्यों गया है?"

'अब कपड़ा बुनने का काम तो छोड़ दिया है।" सुखिया ने सूत की गठरी की ओर देखते हुए कहा—"अब कोई नहीं पहनता ऐसा कपड़ा। शहर में जो कपडे की मिल खुली है, उसमें काम करने को चले गए है।"

"कपडे की मिल कैसी होती है?" वृद्धा ने आश्चर्य से पूछा।

'जैसी हमारे गाँव में आटे की मिल है वैसी ही कपडे की मिल भी होगी।"

"मिल विल से क्या कपड़ा बनता है।" बुढ़िया ने कुछ सोच कर पूछा।

"अरे, बड़ा अच्छा कपड़ा बनता हैं।" दो धोतियाँ दिखाते हुए सुखिया ने कहा।

बुढ़िया की आंखों में आंसू आगए। अंचल से आंसू पोंछते हुए वह बोली "तीन दिन से अन्न का दाना मुँह में नहीं गया है, इसी आशा में थी कि सूत बेच कर पेट भर कर भोजन करूँगी। घर में एक दाना अनाज का नहीं है।"

सुखिया को दया आ गई। दो जौ की रोटी और गुड़ देते हुए बोली "रूक्की भी शहर चली गई है।"

"क्यों?" वृद्धा ने भयभीत होकर पूछा।

"पहले आटा पीस कर सूत कात कर अपना तथा अपने दोनों बच्चों का पेट भर लेती थी। परन्तु अब कोई आटा नहीं पिसवाता। सब मशीन का आटा खाते हैं। क्या करती बेचारी विधवा! शहर में काम मिल जाता है, चली गई।"

वृद्धा ने हाथ जोड़ कर आकाश की ओर देखते हुए कहा—"भगवान मुझे बुलालो।" फिर सुखिया की ओर देख कर बोली "हम गरीब तो भूखे मर जायँगे।"

"अपना अपना भाग्य होता है। बहुत से तो भीख मांग कर अपना पेट पालते हैं।"

"वह नीच होते हैं।" वृद्धा ने गर्व से कहा—"भगवान यह हाथ पांव चलते रहें, कोई तो दयावान दया करके आटा पिसवावेगा ही।"

सुखिया हँसी। वृद्धा को बुरा लगा। वह अपनी सूत की गठरी लेकर जमीदार के घर की ओर चल पड़ी। जमीदारनी सीधी साधी धर्म परायणा युवती थी। गांव की बड़ी बुढ़ियों का आदर करती थी। सब से नम्रता पूर्वक बोलती थी। वृद्धा को देख कर बोली—"बहुत दिन बाद दर्शन हुए माजी।"

पृथ्वी पर बैठ कर उसने कहा—"कुछ कुटवाना पिसवाना हो तो दे दो बहू जी।"

"नहीं, अब तो बहुत अच्छा हो गया है, नदी पर जो मिल है, उसी पर सब पिसवा लेती हूँ। कुछ क्षणों में ढेर का ढेर आटा पीस देते हैं।"

"बहू जी, अब हम क्या करें ?"

"शहर चली जाओ, वहां पर मजदूरी मिलती है।"

"बहू जी तुम चतुर हो, निर्धन पर दया करके कोई युक्ति बता दो, नहीं तो मैं भूखी मर जाऊंगी।"

"और तो उपाय नहीं है।"

वृद्धा का जीवन से इतना मोह देख कर जमींदारनी मुस्करा दी। दो आने देते हुए बोली—"अभी तो मुझे काम है। फिर अवकाश मिले तो अवश्य आना।"

× × ×

झोपड़े में आकर उसने चर्खा उठा कर फेंक दिया। सूत सारी झोपड़ी में बखेर दिया। चक्की उठा कर फेंकने की चेष्टा की परन्तु उसके निर्बल हाथ शक्तिहीन थे। चक्की अपने स्थान से नहीं हटी। मानो वह साधु है— शान्त गभीर—लोग चाहे उसका कितना ही अपमान तथा अवहेलना करें परन्तु वह सच्चे तपोनिष्ठ साधु की तरह अपने स्थान पर अटल रहेगी। वृद्धा अपने सिर पर हाथ रख कर बैठ गई।

भूख से व्याकुल होकर वृद्धा ने शहर जाने का निश्चय किया। अपनी फटी हुई रजाई सिर पर रख कर उसने चुपचाप शहर का मार्ग पकड़ा। ग्रीष्म की कड़कती हुई गर्मी में वृद्धा लकड़ी के सहारे बिना विश्राम किये चली जा रही थी। बीस मील के लम्बे मार्ग को वह एक दम में काँपते हुये मन्द चाल से पार करना चाहती थी। अपनी सुनहरी कल्पनाओं में वह मस्त थी, उसका विश्वास था मानो शहर में उसके लिये थाल परोसा रखा होगा। प्रातः काल में चिड़ियों को उड़ते देख कर उसकी इच्छा हुई थी कि यदि वह चिड़िया होती तो जल्दी से उड़ कर शहर पहुँच जाती परन्तु अब चिड़ियों को वृक्षों पर विश्राम करते देख, उसे उनसे घृणा हो गई थी।

एकाएक वह बैठ गई, उसे चक्कर आ रहे थे, आँखें पथराई जा रही थीं। भूख तथा धूप ने उसकी रही सही शक्ति भी समाप्त कर दी थी। वह चिल्ला उठी 'पानी'.. पा—नी—–पानी।' और वहीं गिर गई।

गाँव से तीन चार आदमी आ रहे थे—उन्होंने वृद्धा को पहचान लिया। वे उसे गाँव उठा कर लाये और जला दिया। इधर चिता जल रही थी, उधर नदी के दूसरे किनारे पर आटे की पनचक्की चल रही थी।

पत्नी के पत्र

अगस्त मास की 'दीदी' में श्री बुद्धिसागर वर्मा ने पत्नी के पत्र लिखे हैं। मैं जानना चाहती हूँ कि ये पत्र वर्मा जी की पत्नी ने उन्हें लिखे हैं या केवल मन गढ़न्त हैं। यदि मन गढ़न्त हैं तो मैं कहूँगी कि वर्मा जी को सफलता नहीं मिली। वे इन्हें और भी रोचक और काम का बना सकते थे।

—सरला चौबे

नानखताई

दीदी में एक बहन ने लिखा है कि नानखताई में समुद्र फेन डालने से किरकिराहट थी। वैसे मैं तो उसमें बूरा, मैदा घी, बराबर के सिवाय कुछ नहीं डालती हूँ। जितना घी तथा शक्कर की फिटाई होगी उतनी ही स्वादिष्ट तथा खस्ता होगी। फिर भी जो बहनें समुद्र फेन डालना चाहें वे उसके ऊपर एक कड़ा छिलका होता है उसे चाकू से खुरच खुरच कर छील डालें फिर समुद्रफेन पीस कर डालें तो बिलकुल मैदा सा पिस जाता है।

—मिसेज़ बी० रत्न, कत्री।

सोसाइटी में

आज के युग में लड़कियों को समाज में व्यवहार करना भी सिखाया जाना चाहिये। वैसे तो यह उनके माता पिता का काम है लेकिन जब 'दीदी' अनेक कार्यों में माता-पिता की सहायता करती है तो इसमें क्यों पीछे रहे। कभी कभी सुयोग्य लेखिका के लेखों द्वारा उन्हें यह भी बता दिया जाये कि शीक्षित महिलाओं के साथ उन्हें किस प्रकार व्यवहार करना चाहिये। कई बार ऐसा होता है कि एक छोटे घर की लड़की बड़े घर में ब्याह दी जाती है और फिर वहाँ उसे 'बेवकूफ' बनना पड़ता है। अतः अच्छा हो यदि 'दीदी' इस बारे में भी उन्हें शिक्षा दे।

—सरला भटनागर

बच्चों की पोशाक

लेखक, पं० किशोरीदास बाजपेयी शास्त्री

पोशाक बच्चों के शारीरिक तथा मानसिक विकास पर अपना निश्चित प्रभाव डालती है और इससे बच्चों के बनने बिगड़ने का विशेष सम्बन्ध है। इसलिये, माता-पिता को इस ओर सबसे ज्यादा सतर्क रहना चाहिये।

बच्चों के लिये उत्तम पोशाक वही है, जो उनके शारीरिक विकास में मदद दे और मानसिक स्वच्छता उत्पन्न करे। पढ़ने लिखने वाले बच्चों के लिये तो पोशाक का विशेष महत्व है। बच्चों की पोशाक कैसी होनी चाहिये, यह अपने इसी लेख में हम आगे बतावेंगे।

कुत्सित पोशाक

अधिकांश माता-पिता अपने बच्चों को चटकीली-भड़कीली पोशाक पहनाने में रुचि रखते हैं, जो हानिकर है। इससे बच्चों के शारीरिक विकास में बाधा पड़ती है। इस तरह मत बैठो, ऐसा मत करो, कपड़े खराब हो जायँगे, यों बच्चों पर सदा अंकुश लगा रहता है। कीमती कपड़ों के खराब हो जाने का डर बच्चों को स्वच्छन्द खेलने नहीं देता। कोई कोई ऐसा भी कीमती कपड़ा होता है, जो धो देने से अपनी 'आब' खो बैठता है। ऐसा कपड़ा बच्चों के शरीर पर आ गया, तो मानों भूत चिपट गया। हरदम उसे बचाने की चिन्ता।

स्कूल में जाने वाले बच्चों को जब ऐसी चटकीली पोशाक पहना दी जाती है, तो वे एक तमाशा बन जाते हैं। हर समय वे अपनी पोशाक दूसरों से मिलाया करते हैं। बढ़िया कीमती कपड़े, बढ़िया डिजाइन से कटे सिले जो बच्चे पहन कर स्कूल जाते हैं, वे प्रायः अपनी श्रेणी में बुद्धू रहते हैं। सीधे-सादे वेश-विन्यास के स्वच्छ बच्चे पढ़ने-लिखने में प्रायः तेज देखे गये हैं। आप किसी भी स्कूल-कालेज में जा कर 'प्रथम' रहने वाले बच्चों को देख सकते हैं।

उत्तम पोशाक

उत्तम पोशाक वह है, जो कम खर्च की हो, अधिक आराम दे, शारीरिक तथा मानसिक स्वस्थता दे। स्कूल के बच्चों की एक ही ढङ्ग की पोशाक होनी चाहिये। इससे राष्ट्रीयता का जागरण होगा। कपड़ा मोटा (खद्दर या अन्य कोई देशी) होना चाहिये, जो कीमत में साधारणतः आठ आने गज से अधिक न हो। दस वर्ष तक के बच्चों के लिये एक घुटन्ना (नेकर) और एक आधी बाँह का कमीज पर्याप्त है। पाँव में सादे चप्पल। सिर नङ्गा। यह लड़के लड़कियों के लिये सामान्य पोशाक है, गरमी और बरसात के लिये। फ्राक के चक्कर में पड़ कर शुरू से ही विलासिता की ओर मन मोड़ना ठीक नहीं। उधर तो तारुण्य प्रवेश के साथ ही झुकाव स्वाभाविक है। तभी शोभा भी है। सिर में चमकीले फूल-फीते भी किस काम के? सादगी सिखाओ। शौकीनी तो स्वतः आ जायगी। विशेषतः गुलाम देश में शौकीनी अत्यन्त अनर्थकर है।

सफाई

बच्चों की पोशाक और शरीर की सफाई अत्यन्त आवश्यक है। पहने हुये वस्त्र प्रतिदिन धुलने चाहिये, गरम कपड़ों का छोड़ कर। जाडे में देशी जूते, मोजे, नेकर, पूरी बाँह का कुर्ता और बन्द गले का सादा कोट, या पूरी बाँह की जाकेट। दस वर्ष तक के लड़के-लड़कियों की यह साधारण पोशाक है। इसके बाद लड़के और लड़कियाँ धोती पहनें। अब लड़कियाँ फ्राक या जम्पर भी पहन सकती हैं। वेश-परिष्कार प्रति दिन चाहिये। उन्हें प्राकृतिक पुष्पों से सजाया भी जा सकता है।

प्रदर्शन

पोशाक स्त्रियाँ प्रायः प्रदर्शन के लिये विशेष रखती हैं। घर में मैली-कुचैली और फूहड़ 'पोशाक' में जो रहती हैं, वे बाहर बाजार में जब निकलेंगी, तो कुछ दूसरी ही नजर आयेंगी। इस प्रदर्शन का बुरा प्रभाव पड़ता है। वे खुद अपने आपको देखती चलती हैं। इससे गुण्डों को प्रोत्साहन मिलता है। सादे रहन सहन की महाराष्ट्र-स्त्री को कोई नहीं छेड़ता, यद्यपि वह पर्दे में नहीं रहती। इसके विरुद्ध, फैशन की पुतली पंजाबी स्त्री प्रति दिन गुण्डों के उत्पात की शिकायत करती है। यह सब 'प्रदर्शन' का फल है।

खैर, मतलब यह कि पोशाक में प्रदर्शन न होनी चाहिये। छोटे बच्चों के मन में यह भावना पैदा करनी चाहिये। घर में और बाहर, सर्वत्र एक जैसी स्वच्छ-सादी पोशाक चाहिये।

राष्ट्र की नींव

बच्चे राष्ट्र की नींव हैं। इन्हें मजबूत बनाइये। इनके सौंदर्य-प्रदर्शन की ओर न जाइये। इससे नींव कमजोर हो जायगी। प्रदर्शन तो ऊपर होता है। जब मकान बन जाय, तब उसे सजाइये। दीवारों में रङ्ग कीजिये। ऊपर सोने का कलश चढ़ाइये। उसे सब देखेंगे। सादा सब रखें, तो और भी अच्छा। ताजमहल की सादगी क्या बुरी है?

जब आपकी सन्तान जवान हो, तब उसे अपनी पोशाक आदि के लिये स्वतन्त्रता दे दीजिये। चाहे जैसी पहने। यह इमारत अब बन चुकी। सजायी भी जा सकती है।

सो, बच्चों की राष्ट्रीय पोशाक एक होनी चाहिये, जो गरीब-अमीर सब अपना सकें और सबके लिये जो नयनाभिराम तथा सुखद हो। बचपन से ही तितली और गुड़िया बनाना ठीक नहीं है।

आशा है, मातायें इस पर विचार करेंगी और मेरे जो विचार संशोधनीय हों, उनका वैसा उल्लेख करेंगी।

अब कौन है ?

लेखिका, श्रीमती रेचल रमा चटरजी

आसुओं की बह रही जो धार है,
कौन पोछेगा उसे; अब कौन है ?
टूट दिल मेरा गया है, घाव गहरे हो गये हैं।
कौन पूरेगा उन्हें; अब कौन है ?
आह ! खिचती ही नहीं है; दर्द टलता ही नहीं है।
चीण काया हो गई है,
कौन थामेगा उसे; अब कौन है ?
ठोकरें भी पड़ रही हैं, चीख दिल से उठ रही हैं।
कोई सुनता ही नहीं है, हे प्रभो किसको पुकारूँ।
तेरे सिवा अब कौन है ?

लौकी का लच्छा

लम्बी लौकी के छिलके उतार लो। हरा पन न रह जावे। तब उसे कद्दूकस से कसो। मगर इस तरह लच्छे उतारो कि पूरी लौकी की लम्बाई के हों और उन्हें पानी में भिगोती जावो। पानी में थोड़ा चूना घोल देना चाहिये ताकि लौकी का कसैलापन जाता रहे। ३-४ घण्टे भिगोने के बाद पानी से निकाल कर धो लो। अब कड़ाही में चीनी की चाशनी तैयार करो। जब एक तार की हो जावे तो उसी में लौकी के लच्छों को डाल कर पकाओ। इतना पक जाना चाहिये कि लौकी पक जावे और चाशनी भी कुछ गाढ़ी हो जावे मगर खुश्क न होने पावे। तब उतार कर थाली में फैला दो और ठंढी कर लो। अब शक्कर यानी (बूरा) में लच्छे लपेट कर रख दो। हर एक लच्छा अलग अलग हो जायगा। यह बहुत स्वादिष्ट और ठंढी वस्तु है। चाहो तो पकाते समय जरा सा गुलाब या केवड़ा का अर्क भी डाल दो।

—आशारानी वर्मा, मुरादाबाद

कच्चे नारियल का लड्डू

कच्चे नारियल को फोड़ कर उसकी महीन महीन कतरी मशीन से बना लो। यानी एकदम चूर हो जानी चाहिये। चीनी की चासनी बनाओ। फिर जब चासनी के दो तार मालूम पड़ें तब उसमें नारियल की सब कतरी डाल दो और उस चासनी को आग पर रख कर चलाती रहो। जब गाढ़ा हो जाय तब उसे उतार लो।

खयाल रहे कि जब चासनी में नारियल डाला जायगा तब चासनी भी पानी ही पानी हो जायगा। इससे घबड़ाना नहीं चाहिये। चासनी को बराबर चलाते रहना चाहिये। ठीक हो जायगी। फिर उसमें एक टिकिया कपूर, छोटी इलायची, बादाम, पिस्ता केशर क्रमशः डाल दो। जब कुछ कुछ ठंढा हो जाय तब उसके लड्डू बना डालो।

यह मिठाई बड़ी ही सुन्दर एवं अच्छी और सस्ती पड़ती है। इसे नया आविष्कार समझें। एक लड्डू खाने पर फिर बार बार खाने की इच्छा होती है।

—कृष्णादेवी सांपरिया, खरसिया

तीन बहनें

लेखिका, कुमारी विद्या वर्मा बी० ए०, श्यामपुरो

मेरे और मेरी छोटी बहन के बीच में एक और बहन हुई थी और एक भाई भी हुआ था। कल रात में हम लोग उन दोनों के बारे में आपस में बात चीत करते रहे। मेरी बहन ने कहा—हमारी वह बहन मौजूद होती तो हम उसे बी० ए० में उर्दू, फारसी दिला कर उसे उर्दू में ही एम० ए० पास कराते—तब मेरा संस्कृत और हिन्दी का अध्ययन ज्यादा अच्छा चलता, क्योंकि फारसी और संस्कृत का बेहद मेल है, वैसी ही जैसा उर्दू और हिन्दी का। संस्कृत में लड़की को दुहितृ कहते थे क्योंकि तब दूध दुहने का काम लड़कियों के ही सुपुर्द था, फारसी में उसे दुख्तर कहते है, इसी तरह मातृ को मादर, पितृ को पिदर, भ्रातृ को बिरादर। है को, फारसी में अस्त कहते हैं तो संस्कृत में अस्ति। अँग्रेजी की बेसिक भाषा में ८४० शब्द हैं। उससे कहीं अधिक यानी कई हजार शब्द संस्कृत और फारसी में एक से हैं। इसीलिए तब हम देनों बहनें मिल कर तुम्हें और अगर वह भाई होता तो उसे भी खूब चिढ़ाते।

मेरी माँ मेरी बहन की इन 'बे सिर पैर की बातें से'—ये शब्द मेरी माँ के ही हैं चिढ़ उठीं, किन्तु अपनी बहन के ऐसे कल्पना उपवन में विचरण से मुझे आनन्द ही मिला और मैंने उसका साथ देना चाहा। मैं बोली—आखिर, तुम हम दोनों को क्यों चिढ़ाती हो ?

उसने कहा—तुम्हें इसलिए कि तुमने संस्कृत न लेकर बी० ए० में राजनीति ली और विदेशी पॉलिटिक्स में बी० ए० हुईं और भाई को इसलिए कि वह साइन्स पढ़ कर मेडिकल कालेज में जाकर जब वहाँ से निकलता तो विदेशी दवाइयों का एजेन्ट और वैसे ही चीड़-फाड़ के यन्त्रों पर निर्भर जर्राह हो जाता।

माँ ने कहा—मैं अपने लड़के को डाक्टरी पढ़ने और ऐसी चीड़-फाड़ करना सीखने के लिए कभी न भेजती।

मेरी बहन हँसती हुई जोर से बोली—वह माँ बाप की सलाह सुनता तब तो—वह तो साइन्स पढ़ता और 'स्वतन्त्र विचारों' के महत्व को समझता समझाता, अपने देश के विचारों पर अश्रद्धा और अरुचि रखनेवाला और फ्रांस के मनमाने क्रान्तिकारियों का, या रूस के अराजक वादियों का या जर्मनी के निटशे आदि दार्शनिकों का अनुयायी हो जाता।

माँ और भी चिढ़ कर बोलीं-हो जाता तो हो जाता—घी का लड्डू, टेढ़ा मेढ़ा चाहे जैसा हो वह अच्छा ही होता है।

मैंने कहा—तो वह उसे बुरा कब कहती है ?

पर मेरी बहन यह क्यों मानती ? उसने तुरन्त कहा—बुरा क्यों न कहूँगी ? घी के लड्डू से दुर्गन्ध आने पर उसे कौन अपने पास रखना चाहेगा ? जब अपनी संस्कृत की मानवता पर विश्वास न रहा तो फिर मानव होने से लाभ ही क्या ?

मैंने कहा—'संस्कृति की मानवता' क्या होती है ?—मानवता तो मानव की सी होती है और वह असल में सभी देशों के सभी लोगों में है—चाहे जितनी सुप्त अवस्था में हो। उसी को जाग्रत करना हमारा परम कर्तव्य है, न कि ऐसे भेद-भावों का विचार करना या उन्हें बढ़ाना।

माँ ने कहा—नहीं, सब लोगों की सभ्यता एक नहीं है—जो हमें जबरदस्ती जंगली कह कर और हमारे यहाँ जबरदस्ती झगड़ों की उत्पत्ति करके और हमारी अत्यन्त आवश्यक वस्तुओं खाने पहनने के पदार्थों तक को—यहाँ से दुनिया भर में जबरदस्ती ले ले जा करके अपनी सभ्यता भयानक टैंकों और हजारों टन बम प्रति घंटे फेंकनेवाले हवाई जहाजों के जरिये बढ़ा रहे हैं उनसे हम न तो मानवता का पाठ सीख सकते है, न उनकी सुप्त माननता को कभी जगा सकते है।

अपनी माँ से ऐसी बात इस जिन्दगी में कभी सुनूँगी ऐसा मैंने नहीं समझा था। इस बार जो कड़े से कड़ा धक्का

देश भर को लगा है, उसके इस प्रभाव को देख कर मैं कुछ देर सोचती रह गई !

इसी समय पिता जी बाहर से आये। आकर बोले--लो, 'रवि की विचित्रता' पढ़ो—आज कल की मार-काट रवि की किरणों के प्रयोगों को जान कर बेहद बढ़ाई जा सकती है।

माँ ने कहा—अभी बेहद का शौक बाकी है क्या ?

और वे उठ कर रसोई घर में चली गई। हम सब भी खाना खाने गये।

× × × ×

खाने-पीने के थोड़ी देर बाद मैं चारपाई पर पड़ी पड़ी इन बातों के बारे में सोचती रही, मेरी बहन लेटी लेटी 'रवि की विचित्रता' पढ़ती रही और फिर मैं सो गई।

सोते ही देखा मेरी वह बहन और वह भाई, दोनों, हमारे यहाँ आ गये हैं और मेरी वह बहन माँ से हँसते हुए कह रही है—तम लड़कों को घी के लड्डू की तरह समझती हो और हम लोगों को ? माँ ने आँखों में आँसू भर के कहा—बेटी मैं तुम सब लोगों को एक सा समझती हूँ—मेरे लिए तुम सब बराबर हो, पर मैं इस समाज को क्या कहूँ और अपने देश की इस पराधीनता को क्या करूँ जिससे हम अपने लिए आवश्यक और समयानुकूल नियमों और कानूनों को किसी तरह अब तक न बना पाये, और न बना पा रहे हैं।

मेरी बहन ने कहा—माँ, इसीलिए तो मैं चली गई—दूसरे देश चली गयी और फिर तीसरे देश चली गयी, लेकिन सभी जगह 'मानवता' का दि ाला सा निकल रहा है। सुना है, पहले भी लंका टापू के रहनेवालों ने शिव जी के शिष्यों से शिक्षा प्राप्त करके वायुयान बनाये थे और तब इस शक्ति-बल से मदांध होकर विन्ध्या के दक्षिण के पूरे भाग को अपने प्रभाव में कर लिया था और पतालपुरी में अहिरावण का राज्य स्थापित कर दिया था। केकय देश की केकयी ने और विहार के ऋषिराज जनक ने और अनेक ऋषियों और राजाओं ने यह सब देख समझ नरहीराय को दक्षिण भारत भेजा था और राय ने इस मानवता हीन यंत्री-सभ्यता का नाश कर दिया था। पता नहीं इसमें कितना सत्य है, क्योंकि अब अनेक विद्वान कहते हैं कि राय कभी हुए ही नहीं, यह एक प्रचार मात्र है और अगर हुए भी तो वह युग अर्ध-सभ्य युग था।

मेरे भाई ने कहा—'अर्ध-सभ्य' या 'असभ्य' तो हमें अपने को अब भी कहना चाहिए। जब वे ही देश जो सब से अधिक 'सभ्य' और 'विज्ञानवेत्ता' समझे जाते थे एक दूसरे पर इस तरह बम प्रहार कर रहे हैं। वह बहन बोली—ठीक कहते हो भइया ! इसीलिए तो मैंने तुम्हारी बात मान ली और उन देशों से भाग आई।

अब मैंने साहस करके कहा हमारी दशा तो और भी गयी बीती है, हमारी तरह जिन बड़े-बड़े देशों के लोग दुनिया की दौड़ में पिछड़े हुए है या योरुप के छोटे-छोटे देशों के लोगों की तरह अभी तक वैसे मिल कर एक नहीं हो पाये जैसे रूस-और अमरीका में एक हो गये हैं। उन्हीं के तरह तरह से शोषण करने के लिए तो यह सब लड़ाई झगड़ा हो रहा है न ?

मेरे भाई ने कहा—इसीलिए तो हम दोनों यहाँ आये हैं—

मुझे हँसी आई और दुःख भी हुआ—हँसी यह सोच-कर आई कि ये लोग अपने को ऐसा बुद्धिमान् या शक्ति-शाली समझ बैठे हैं कि जहाँ हमारा सबसे बड़ा नेता कुछ नहीं कर पा रहा है वहाँ से कुछ कर सकने का दम भरते हैं और दुःख यह सोचकर कि कई दूसरे देशों में न जाने कितनी अधिक उन्नति का नया युग प्रारम्भ होने जा रहा है, पर हम अपने पिँजड़े में बन्द हैं।

मेरी उस बहन ने मानों मेरे मन की बात समझ ली। उसने मेरी ओर देखकर कहा बहन, समय चक्र जिस शक्ति के हाथ में है उसे हमारे देश ने बहुत पहले सर्वोपरि चतुर्भुजी शक्ति के रूप में समझा था ? इस संसार में केवल मानव शक्ति नहीं है, पर मानव शक्ति की उपेक्षा भी नहीं की जा सकती। हम दोनों बात की बात में अन्तर्ध्यान हो सकते हैं, चाहे जिस दूरी पर अपने मन से दूसरे के मन को संदेश भेज सकते हैं और बिना शस्त्र शक्ति के संसार में शान्ति स्थापित कर सकते हैं।

मैं अगर किसी की बेहद विरोधनी हूँ तो ऐसी बहकाने-वाली बातों से अपने को और दूसरे को पागल बनानेवाले व्यक्तियों की। इसलिए मैं चिल्ला उठी—बस करो, बस

करो, अब इस देश पर इस सदी में तो दया करो। हमें ऐसे योगियों और अति-मानवों की आवश्यकता नहीं, हम साधारण जन हैं—साधारण जनों की ही संस्थायें बनाकर उन्हीं की शक्ति से हमें चलने दो!

मेरे भाई ने कहा—तुम समझी नहीं—हम साधारण शक्तियों के और उनके संगठन के विरोधी नहीं हैं पर हमारा उद्देश्य तो सफेद और रंगीन जातियों के, काली, पीली जातियों के, एशियाई और युरोपियन या अमेरिकन जातियों के और अफरीकी जातियों के, हिन्दुस्तान की तरह तरह की जातियों और लोगों के और ऐसे ही दूसरे देशों की जातियों और लोगों के सब भेद-भावों को हल कर उनमें सच्चे परिवारों का रिश्ता पक्का कर देना है। इसके लिए सभी उपायों को काम में लाना होगा। मैं इसीलिए तपस्या करने गया था—स्वयम् पिता जी की ऐसी इच्छा थी—उनके एक मित्र भी गये हैं—उन्हें तुम जानती ही होगी—

मैंने कहा—मैं जानती हूँ, पर पिता जी के विचार तो बिलकुल बदल गये हैं। उन्होंने मुझे राजनीति पढ़ाई—स्वयं पढ़ाई—सब देशों के विधान बताये।

उस बहन ने कहा—विचार बदल रहे थे इसीलिए तो मैं चली गयी। तुम दोनों बहनें यहाँ अपने ढङ्ग से काम करो, हम दोनों भाई बहन अपने ढङ्ग से करेंगे। सब देशों का विधान अब एक सा ही होना चाहिए।

मैंने कहा—तुम यहीं रहो—हम तीनों बहनें साथ साथ काम करें—आज ही मेरी बहन अपनी यह इच्छा प्रकट कर रही थी!

वह जोर से हँस पड़ी—ओह वह इच्छा! वह सब बात की बात में ठीक हो जावेगा—पर पहले जो काम अभी करना है वही करना होगा। उसी को इस समय के सम्पूर्ण संसार को आवश्यकता है!

मैंने कहा होगी—तुम यहीं रहो!

मैंने देखा इस बात के सुनते ही उसने विचित्र रुद्र रूप धारण कर लिया!

वह बोली—इसी भूल, इसी नीच स्वार्थ, इसी आलस्य, इसी झूठे आनन्द के आकर्षण से हम नीचे खिसकते हैं, या ज्यों के त्यों पड़े रहते हैं! त्याग और कष्ट से डर क्यों? सभी देशों के युवकों का इनसे सामना पड़ रहा है—पर वे असली उद्देश्य भूल रहे हैं। इससे सब गड़बड़ हो रहा है। हम दोनों इस उद्देश्य के लिए मर मिटेंगे।

'तुम मत जाओ' मैं चिल्लाई। पर वह गायब थी और मेरी माँ कह रही थी—फिर चौंक और चिल्ला रही हो—आज कल तुम बहुत चौंकने और चिल्लाने लगी हो—सिरहाने तकिये के नीचे रामायण रख लिया करो और हनुमान जी की स्तुति पढ़कर तब सोया करो।

मेरी छोटी बहन सुनकर हँसने लगी। मेरी आँखों से आँसू बह चले। यह अच्छा था कि अंधकार में उन्हें कोई देख न सकता था।

गीत

लेखिका, श्रीमती अशर्फी देवी 'शिवा'

सजनि, नव-शृङ्गार कर ले।
मंद मुसकाती उषा को आज जाकर अंक भर ले।
जिस निठुर की मधुर सुधि में,
नित्य लोचन छल-छलाये।
सतत जिसके मृदुल पथ में,
पलक-दल तूने बिछाये।
आज प्रीतम आ रहे हैं मधु-मिलन का अमर वर ले।
सजनि, नव शृङ्गार कर ले।
हँस रही हैं आज किरणें,
नील अम्बर के निलय में।
पवन है मस्ती लुटाता,
झूमता-सा कुसुम-चय में।
अलि, तरल मुसकान से अपना विरह का ताप हर ले।
सजनि, नव-शृङ्गार कर ले।
चिर पिपासित सजल नयनों,
में छलकता प्यार होगा।
सरस पूनो की निशा में,
प्रेममय अभिसार होगा।
शून्य मन-मंदिर सजाकर आज जगमग दीप धर ले।
सजनि, नव-शृङ्गार कर ले।
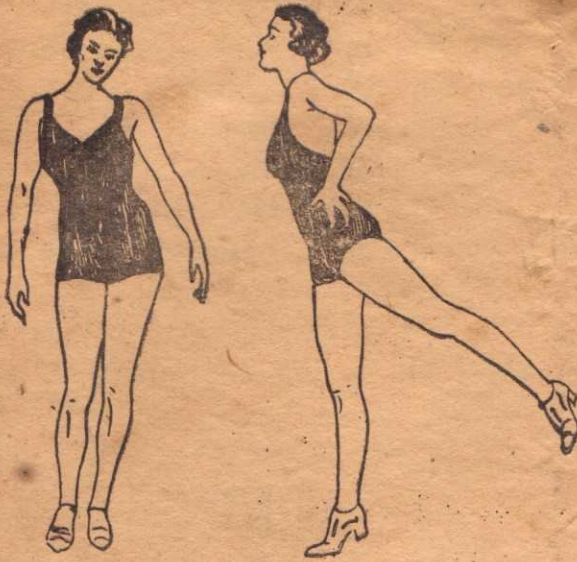
कटि-प्रदेश

एक पाँव पर बल देकर कभी मत खड़ी होओ जैसा कि पहले चित्र में है। इससे कटि-प्रदेश बेडौल हो जायगा। कटि-प्रदेश को सुडौल बनाने के लिये दूसरे चित्र पर ध्यान दें। पूर्ण हिदायत इस लेख के अन्त में पढ़ें।

लेखिका,

पेड़ू और उसके दोनों बगल की मांस-पेशियों को कटि प्रदेश कह सकते हैं। स्त्री का सौंदर्य बहुत कुछ शरीर के इसी भाग की सुडौलता पर निर्भर रहता है। अतएव प्रत्येक स्त्री को इसका खास तौर से ध्यान रखना चाहिये।

इस सम्बन्ध में प्रायः बहनें मुझसे पूछती रहती हैं। उनकी चिन्ता के दो कारण हो सकते हैं।

(१) वे मोटी हो गई हैं।

या (२) उनके कटि देश की गठन शुरू से ही बिगड़ी है। उनकी चिन्ता दूर करने के उपाय भी दो ही हो सकते हैं।

(१) यहाँ जो व्यायाम बताये जा रहे हैं, उन्हें करें।

(२) अपने शरीर को निरन्तर सही हालत में रखने की चेष्टा करती रहें।

बराबर एक ही ढङ्ग से बैठे रहने से पेड़ू पर बोझ पड़ता है और वह भद्दा हो जाता है। यदि आप बराबर कुछ व्यायाम करती रहें तो उसका असर कम हो जा सकता है।

मनुष्य का शरीर भी पेड़ और पौधे की भाँति एक खास अवस्था में रखने से सुन्दर प्रतीत होता है। जिस प्रकार टेढ़ा मेढ़ा वृक्ष अच्छा नहीं लगता वैसे ही टेढ़ा शरीर भी अच्छा नहीं लगता। अतएव शरीर को सही हालत में रखने का प्रयत्न बचपन से ही शुरू होना चाहिये।

राजकन्याओं को बचपन से ही एक खास ढंग से बैठना, खास ढंग से खड़े होना और खास ढंग से चलना सिखाया जाता है। ताकि जब वे रानी बनें तब उनमें कोई त्रुटि न दीखे।

जो सौंदर्य राज-कन्याओं के लिये जरूरी है, वही प्रत्येक स्त्री के लिये जरूरी है। जिस प्रकार रानियाँ अपने शरीर को एक खास अवस्था में रख कर चलती हैं उसी प्रकार प्रत्येक स्त्री को चलना चाहिये। यानी तुम इस तरह उठो, बैठो और चलो कि रानी सी जान पड़ो। इसी तरह निरन्तर रहने की आदत डालो।

कुछ लोग सोचते हैं कि जब स्त्री के बच्चा पैदा होता है तब उसका सौंदर्य नष्ट हो जाता है, खास कर कटि-प्रदेश का सौंदर्य। इन बातों का कभी विश्वास न करो।

अगर कोई तुमसे कहे—'सन्तान होने के बाद तुम्हारा यह सौंदर्य न रहेगा।' तो उसकी बात मत सुनो। अपने सौंदर्य को बनाये रखने के लिये तुम्हें थोड़ा परिश्रम करना पड़ेगा और कुछ नहीं।

एक अमरीकन लेखिका ने अपने एक लेख में अमरीका की एक स्त्री का जिक्र किया है। उस स्त्री की अवस्था ७४ वर्ष की थी और उसके .० सन्तानें हुई थीं तथापि वह

का सौंदर्य्य

यह दूसरा व्यायाम भी करें। इसके करने का तरीका इस लेख के अन्त में बताया गया है। उसे ध्यान से पढ़ें और इन चित्रों को देखें। सब समझ में आ जायगा।

श्रीमती श्यामा बाई

बालिका सी दिखती थी। कारण कि उसने अपने कूल्हों को कन्ट्रोल में रक्खा था।

अमरीका में एक बार सौंदर्य प्रतियोगिता हुई। उसमें बाजी मारने वाली एक ऐसी युवती थी जिसके सन्तान हो चुकी थी। इसका यह अर्थ है कि सन्तान होने से स्त्री का सौंदर्य बिगड़ता नहीं है। कई लेखकों का तो यहाँ तक कहना है कि संतान होने से सौंदर्य बढ़ता है।

यहाँ जो व्यायाम दिये जा रहे हैं उन्हें कीजिये। इससे आपका पेड़ू कूल्हा और कटि प्रदेश आपके काबू में रहेगा। परन्तु यह ध्यान रखिये कि इसके लिये शरीर को बराबर एक खास तौल पर रखने की भी आवश्यकता है।

जब खड़ी होओ इस तरह खड़ी होओ कि शरीर का बोझ दोनों पाँवों पर बराबर बटा रहे। यह नहीं कि एक पाँव पर ज्यादा जोर पड़े और दूसरे पर कम। इस तरह खड़े होने से कूल्हा बेडौल हो जाता है।

पहला व्यायाम – कमर पर हाथों को रखिये। अँगुलियाँ खुली रहें ताकि तुम कूल्हे का स्पर्श अनुभव करो। कमरे में पञ्जों पर चलो। प्रत्येक डग में दूसरे पैर को पीछे की ओर सीधा ले जाओ। आगे के पैर में भी घुटना तना रहे। एक पंजे पर शरीर को तौलो और जब तक खड़ी रह सको खड़ी रहो। फिर यही व्यायाम दूसरे पंजे पर करो।

दूसरा व्यायाम—कमरे में एक कुर्सी रख लो। उसकी पीठ का ऊपरी सिरा एक हाथ से पकड़ो। बायाँ पैर उठाओ। घुटने को कूल्हे की सीध में लाओ। पैर मुड़ा रहे। अब बगल की ओर घूम जाओ। फिर पीठ की ओर घूम जाओ। फिर साधारण स्थिति में आ जाओ। यही व्यायाम दूसरे पैर से करो।

इस लेख में बताई गई बातों को ध्यान में रक्खो और यह व्यायाम बराबर करती रहो तो आपका पेड़ू सुडौल बना रहेगा और फल-स्वरूप आपका शरीर सुन्दर दिखेगा।

आकाङ्क्षा

लेखक, श्री बालकृष्ण पोद्दार

(१)

सोमर, बहुत सवेरे खा पीकर, छेनी हथौड़ा लिये, बन सँवर कर झोंपड़ी से निकलता और अपने दल के लोगों के साथ; अबरख के खेतों में काम पर चला जाता। रूरी उस समय सब काम धन्धे छोड़ कर, सजल नेत्रों से सोमर की ओर देखती तथा आँखों से ओझल होने तक उसे देखती रहती! इसके पश्चात एक लम्बी साँस छोड़ कर वह पूर्ववत छुरी की नोक से अबरख के छिलके उतारने में लग जाती।

पहले तो वे दोनों एक साथ ही काम पर जाते थे। किन्तु जब से सरकार ने, खानों में औरतों के प्रवेश पर प्रतिबन्ध लगा दिया, तब से उन्हें समूचा दिन एक दूसरे से अलग रह कर बिताना पड़ता।

सन्ध्या को जब उसके घर लौटने का वक्त होता, तब रूरी झोंपड़े के बाहर आकर बैठ जाती और सामने के खेतों की पगडन्डी पर नजर गड़ा देती। उस पगडन्डी पर जब सोमर बंसी बजाता हुआ द्रुतवेग से आता दिखलाई देता, तब उसकी बांछे खिल जाती थीं।

दूर ही से सोमर की बंसी की तान से उसके आने की सूचना मिलने पर रूरी के ओठों पर मुस्कुराहट दौड़ पड़ती।

(२)

सोमर, रूरी के प्यार को पाकर अपने को वास्तव में सौभाग्यशाली समझता था। उस टांड़ (छोटी बस्ती) में अन्यान्य माँझी उसके दाम्पत्य जीवन की चर्चा करते हुए कहते —' सोमर जैसा, टंडिया भर में कोई सुखी नहीं है।"

किन्तु इतना होने पर भी सोमर और रूरी को संतान का अभाव हमेशा बेचैन किये रहता था। काम पर जाने के समय रास्ते में जब सोमर छोटे छोटे लड़कों को, कंधे पर तीर कमान लटकाये तथा बंसी बजाते हुए, गायें चराते देखता तो वह उन पर मोहित हो जाता। थोड़ी देर तब खड़े रह कर, ललचाई हुई नजर से उनको एक टक देखता और लम्बी साँस खींच कर काम पर चल देता। रास्ते भर वैसे ही एक सुकुमार बच्चे का बाप बनने का सुखद स्वप्न देखता हुआ वह अबरख की खान पर पहुँचता। वहाँ अपने सहयोगी माँझियों के लड़के लड़कियों को, नन्हें नन्हें हाथों से अबरख की टिकरियों को सँवारते देखता, तो उसकी आकाङ्क्षा और भी प्रबल हो जाती थी।

इस आकाङ्क्षा की पूर्ति के लिये कोई उपाय जानने के निमित्त, उसने टांड़के बूढ़े मुखिया को कलवरिया में ले जाकर कई बार भर पेट ताड़ी पिलाई। प्रसन्न हो मुखिया ने उसको एक उपाय बतलाया। उसने कहा—"सोमरा! जो तेरे को बुनस (लड़के) की चाह पूरी करनी हो, तो हर माह, मोहगड़ियावाली मनसा माई को बलि चढ़ाया करो।"

बूढ़े मुखिया के उपदेश के अनुसार वह हर महीने बकरी के एक बच्चे को महुआ के गाछ के सामने ले जाकर उसका बलिदान कर देता। चन्द चुने हुए इन महुओं के पेड़ों को ही वहाँ के माँझी देवी और देवता मानते थे।

(३)

हटिया के दिन सोमर और रूरी जब बगल के गाँव में जाते, तो लौटने के वक्त, भावी बच्चे के लिये वे एक न एक चीज अवश्य खरीद लाते थे। ताड़ी के नशे में चूर हो, दोनों रास्ते भर बच्चे के सम्बन्ध में नाना प्रकार की गप्प हाँकते हुए घर लौटते थे। रात के समय निद्रा में भी उन्हें बच्चे का ही स्वप्न दिखलाई देता था।

(४)

एक दिन उनका स्वप्न सत्य हो गया। रूरी ने श्यामल तथा सुकुमार बच्चे को जन्म दिया। सोमर के आनन्द की कोई सीमा न रही। उसी दिन दौड़ दौड़ कर, वह अगल बगल के गाँवों में अपने मित्र और रिश्तेदारों को न्यौता दे आया और झोपड़ी के आँगन में से गड़े हुए रुपये निकाल कर उत्सव मनाने में लग गया।

महुए का तो उसने झरना सा बहा दिया। आमंत्रित नर नारी, नशे में झूम झूम कर नाचने और गाने लगे। मादलवाला बूढ़ा माँझी नशे की झोंक में पूरी रफतार के

साथ मादल (ढोलक) पर हाथ चला रहा था। मुरली-वाले गर्दन हिला हिला कर उससे मोर्चा ले रहे थे। और युवती मँझियाइनें मदमस्त हो अपने निखरे हुए यौवन के रस को टपकाती हुई, गुनगुनाकर, कबड्डी सी खेल रही थीं। नवजवान माँझिये, अपने आपको भूल कर रसिक भ्रमरों की तरह उनके स्वर के स्वर मिला, गूञ्ज रहे थे तथा उनकी पदध्वनि का अनुकरण कर, जैसे वे नचाती थी वैसे ही नाचते थे।

अन्यान्य लोग एक तरफ बैठे, महुए के दौर चला रहे थे। सोमर महुए की हाँडी हाथ में लिये इधर से उधर लोगों के पात्रों में ढाल रहा था। बीच बीच के हाँडी को साथ लिये झौपड़ी के द्वार से झाँक कर रूरी से चार आँखें कर मुस्कुरा आता था। उस समय सोमर गर्व के मारे फूला नहीं समाता था।

(५)

सोमर की मुँह माँगी मुराद पूरी हुई। पुत्र प्राप्ति के दूसरे ही दिन एक बड़ा बकरा उसने अपनी इष्ट-देवी को भेंट चढ़ाया तथा बूढ़े मुखिया की नेक सलाह के लिये उसने बार बार कृतज्ञता प्रकट की। बूढ़ा मुखिया भी उस समय अपने आपको पीर समझने लगा।

किन्तु तीसरे ही दिन, सोमर का वह सुख स्वप्न भंग हो गया। नवजात बच्चे को न जाने क्या हुआ और वह मर गया। रूरी के करुण विलाप से समूचा टोला निस्तब्ध हो गया। और सोमर का तो हाल ही बेहाल था। उसके झोंपड़े के बाहर समवेदना दिखाने के लिये टांड़ के प्रायः सभी माँझी मौजूद थे। बूढ़ा मुखिया भी एक कोने में बैठा सिर धुन रहा था। सोमर को मुँह दिखाने में उसे लज्जा मालूम होती थी।

सभी के चेहरों पर मुर्दनी छायी हुई थी। बीच बीच में रूरी और सोमर के क्रन्दन से कुछ लोग सिहर उठते थे। जब मृत बच्चे को अन्त्येष्टि के लिये रूरी से पृथक किया गया तो रूरी जमीन पर गिर पड़ी। सोमर पागल की तरह बच्चे को ले जानेवाले को गालियाँ देने लगा तथा उसे मारने के लिये दौड़ा। मगर मुश्किल से तीन-चार माँझियों ने उसको पकड़ कर बैठाया।

उस दिन सोमर के घर में चूल्हा नहीं जला। पड़ोस के एक माँझी ने खाना लाकर सोमर और रूरी को खिलाने की बहुत चेष्टा की, मगर उन लोगों ने एक कौर भी मुँह में न लगाया। दिन भर रोने उपवास करने के बाद सन्ध्या होने के एक पहर पूर्व, सोमर घर से निकला और जंगल की तरफ चला गया।

(६)

बच्चे के विछोह से सोमर इतना व्याकुल हो रहा था, कि वह अपने वास्तविक जीवन को भूल गया। पागल की तरह लड़खड़ाता हुआ, वह उस गाछ की खोज में चला, जिसके आश्रय में उसका प्यारा बच्चा पत्थर के टुकड़ों से ढँक कर रख दिया गया था।

रास्ते में उसे महुए के वे पेड़ भी मिले, जहाँ कल ही उसने बकरे की बली चढ़ाई थी। उनके बगल से गुजरते हुए, उसने देखा कि बकरे का खून सूख कर सूर्य की किरणों से चमचमा रहा था। बलिदान के समय बकरे ने जो आर्त्तनाद किया था, वह उसके कानों में गूँज उठा। उन पेड़ों की ओर एक बार उसने घृणा की दृष्टि से देखा और आगे चल पड़ा।

नाले के उस पार रास्ते के मील-पत्थर से थोड़ी ही दूर पर उसका नन्हा सा बच्चा, प्रकृति की गोद में स्थायी नींद ले रहा था। उस पर नजर पड़ते ही, सोमर आवेश में आकर चिल्ला उठा और दौड़ कर उसके निकट पहुँचा। जल्दी जल्दी पत्थर के टुकड़े उठा कर दूर फेंके और बच्चे को उठा कर छाती से लगा लिया।

घण्टों ही वह वहाँ बैठा बच्चे को गोद में लिये, विलाप करता रहा। रोते रोते उसकी आँखें सूज गई थीं। बच्चे के सम्बन्ध में नानाप्रकार की बातें उसके दिमाग में आती थीं। कभी वह बच्चे को घर ले जाने की बात सोचता। मगर "रूरी, और दूसरे माँझी, उसे पागल समझेंगे।" यह सोच-कर वह अपना विचार बदल देता। कभी बच्चे को लेजाकर किसी ओझा से उपचार कराने का इरादा करता, किन्तु दूसरे ही क्षण इसे भी निरर्थक समझ कर इस इरादे को भी बदल देता। घण्टों के विचार विमर्श के पश्चात उसके दिमाग में यह बात भली भाँति जँच गई कि "किसी हालत में भी बच्चा जी नहीं सकता। वह सचमुच मर गया है और हमेशा के लिये मर गया है।"

बच्चे को मरा हुआ मान कर भी वह उसे वहाँ छोड़ने के लिये तैयार नहीं था। वह सोचता था—"प्राण निकल गये तो क्या हुआ, बच्चे का शरीर तो वही है, ना, जिसे रूरी अपने बगल में चिपकाये पूरे यत्न के साथ रखती थी। फिर भला उसी सलोने बच्चे को, वह इस जंगल में किस के भरोसे छोड़ जायगा।"

इसी अवस्था में करीब आधी रात बीत गई। दिन भर की, मानसिक और शारीरिक क्लान्ति के कारण, उसे जँभाई आने लगी और थोड़ी ही देर में निद्रा ने आ घेरा। मृत बच्चे को बगल में सुलाये, सोमर खुर्राटे लेने लगा और शीघ्र ही बच्चे की मौत, जंगल की निद्रा, इन सब बातों को भूल कर वह स्वप्न-साम्राज्य में स्वच्छन्द हो विचरण करने लगा।

भोर होने के थोड़ी देर पूर्व स्वप्न में उसने देखा कि कोई उसके बच्चे को घर से चुरा कर लिये जा रहा है। चमक कर उसकी आँख खुल गई और हड़बड़ा कर उठ बैठा। उसने देखा कि वास्तव में बगल में सोये हुए बच्चे को किसी ने चुरा लिया है। कफन के सिवाय वहाँ बच्चे का कोई पता नहीं था। तब तक बच्चा सियार और कुत्तों का ग्रास बन चुका था।

(७)

चन्द घण्टों की निद्रा और स्वप्न-विहार से सोमर का दिमाग कुछ कुछ प्रकृतस्थ हो गया था। पिछले दिन की दुर्घटना के स्मरण से उसका माथा चक्कर खाने लगा। किन्तु कल की सी उत्तेजना उसमें नहीं थी। थोड़ी देर के पश्चात, शून्य हृदय को लिये वह उठा और वहाँ से रवाना हुआ।

रास्ते में चलने के समय, वह विचारधारा में इतना अधिक डूबा हुआ था कि उसे चलने का कोई ज्ञान नहीं था। अपने आप उसके पाँव चल रहे थे। नाले के किनारे जब वह पहुँचा, तो किसी चीज को देख कर उसकी तन्द्रा भङ्ग हो गई। उसने देखा कि मिट्टी के बर्तन में एक नवजात बच्चा पानी पर तैर रहा है। नाले के किनारे के छोटे से चट्टान से वह बर्तन अटका हुआ है।

इस दृश्य को देख कर सोमर का दिल उमड़ पड़ा। वह बच्चा उसे ठीक अपने ही बच्चे के जैसा दिखलाई दिया। न जाने किस कलङ्किनी का कलङ्क था, वह। किन्तु सोमर ने उसे अपना ही बच्चा समझा। कुछ देर के लिये अपने दुख को वह भूल गया और उसकी आँखों में हर्ष के मारे आँसू छलछला आये। आहिस्ते से बच्चे को उठा कर, उसने गोद में लिया। बच्चा किलकिला कर रो पड़ा। सोमर उसे पुचकार कर गोदी में झुलाने लगा।

(८)

बच्चे को गोद में लिये, सोमर जब अपनी झोपड़ी के पास पहुँचा तो रूरी उसे दूर ही से देख कर चिल्ला पड़ी—'अरे! तुमने यह क्या किया!! मरे हुये बच्चे को वापस क्यों ले आये!!!

टांड़ (छोटी बस्ती) के सभी लोग इस दृश्य को देख कर अवाक् थे। सोमर ने मुस्कराते हुये कहा—'नहीं पगली! यह मरा नहीं है। जीता, जागता है। भगवान ने अपने बच्चे को लौटा दिया है।'

सोमर की बातों पर, रूरी को विश्वास नहीं हुआ। उसने दौड़ कर आकुल नेत्रों से बच्चे को देखा। गदगद हो उसके मुँह से निकल पड़ा—'अरे! यह तो सचमुच जिन्दा है।'

उस समय, शोक और हर्ष की चरम सीमा पर पहुँचने के कारण रूरी, सुधबुध खो बैठी। यद्यपि उसके नेत्र कोण में तब भी आँसू चमचमा रहे थे, किन्तु आनन्दोल्लास के मारे अपनी सुन्दर दन्तपंक्ति प्रसारित कर, वह खिलखिला कर हँसने लगी। मातृत्व का भाव द्रुत वेग से, उसके दिल में उमड़ पड़ा। उसके स्तनों से अपने आप दूध झरने लगा। बड़े प्यार के साथ उसने बच्चे को अपनी गोद में ले लिया।

(९)

रूरी और सोमर ने बच्चे का नाम रखा, अकलू। कुछ दिनों में अकलू की छोटी सी आत्मा तोतले अस्फुट शब्दों में प्रस्फुटित होने लगी और वह तुतला कर उन दोनों का मनोरञ्जन करने लगा।

रूरी और सोमर, उसके भावी जीवन का चित्र तैयार करते और उस सुख की कल्पना में आनन्द के मारे हँसने लगते।

सोमर उसके लिये छोटे छोटे तीर-कमान, छोटी सी

बाँसुरी इत्यादि कई प्रकार के खिलौने तैयार करता और रूरी से कहता—'रूरी ! अपने अकलू के लिये ये चीजें ठीक से रख दे। वह जब बड़ा होगा तो इनसे खेलेगा।

अकलू जब ठुमक ठुमक कर चलने लगा तो एक दिन रूरी ने सोमर से कहा—'अजी, अकलू के बापू ! इसके लिये एक जोड़ा जूता मँगवादो········।

फरमाइश की देर थी। सोमर ने जूता मँगाने का उपाय, सोचना आरम्भ किया। रास्ते में एक दिन घर आते समय उसने बस-सर्विस के ड्राइवर से जान पहचान की। दो तीन बार की मुलाकात के बाद एक दिन उसने बस के ड्राइवर को अकलू के पाँव के नाप का तिनका और एक रुपया दिया। दूसरे या तीसरे ही दिन अकलू के जूते आ गये।

जूते को आँचल से पोंछते हुये, रूरी ने बड़े चाव से अकलू को पहनाया। बीड़ी की फूँक टानते हुये, सोमर ने गर्व के साथ मुस्कराकर कहा 'देखा री ! कैसा अच्छा बूट है। तूँ कहे, तो तेरे लिये भी एक जोड़ा मँगा दूँ।'

आँचल के छोर से मुँह की हँसी छिपाते हुये, रूरी ने जरा बन कर कहा—'ऊँह, इस बुढ़िया को बूट क्या अच्छे लगेंगे ! बूट पहनाने का शौक हो, तो कोई नई ले आओ।'

सोमर—'अरा ! नखटा क्यों करती हो !! तेरा अभी बिगड़ा ही क्या है। अभी तो तू बिलकुल चुस्त है।'

गर्व के साथ इठला कर, बीच ही में बात काटती हुई रूरी बोली—'बस, रहने भी दो। इस बुढ़ौती में इतना इतराना अच्छा नहीं।'

(१०)

अकलू जिस समय बारह साल का हुआ, तो वह बड़ा ही शरारती निकला। माँ बाप के अन्धे प्यार ने उसको बिलकुल उदण्ड बना दिया। प्यार के कारण, सोमर और रूरी उस पर कड़ा शासन नहीं कर पाते थे। और इसी कारण वह दिन पर दिन निरंकुश हो गया।

नित्य एक न एक शिकायत लगी रहती थी। कभी वह किसी के मेमने को तीर मार देता, कभी किसी लड़के की मरम्मत कर देता और कभी अबरख की खान में काम करने वाले माँझियों पर, ऊपर से मिट्टी का ढेर गिरा देता, इसी प्रकार हर रोज उसकी एक न एक शरारत बनी रहती थी। सोमर उसे बहुत कुछ समझाता, मगर उसके एक भी न लगती। अधिक कहने पर अकलू घर छोड़ कर भाग जाने की धमकी देता।

सोमर चुप हो उसकी हरकतों को सहन करता। साध का लाड़ला बेटा था। आखिर करता भी तो क्या करता। लोगों के सामने गिड़गिड़ा कर, माफी माँग कर, यथाशक्ति हर्जाना चुका कर, वह अकलू की हरकतों का परिमार्जन करता।

किन्तु इतना होते हुये भी, इस बात का उसको संतोष और गर्व था, कि अकलू अपने काम में पूरा निपुण था। खान में इस सफाई के साथ छेनी-हथौड़ा चलाता कि बूढ़े और पुराने अनुभवी माँझी भी उसकी कला को देख कर दङ्ग रह जाते। इसके अलावा बात चीत करने में भी वह टाँड़ के किसी माँझी को नहीं लगाने देता था। केवल इन्हीं विशेषताओं के कारण, सोमर, अकलू के सब अपराधों को क्षमा कर देता !

(११)

समय बीतते देर नहीं लगती। आनन फानन में दस वर्ष और व्यतीत हो गये। अकलू पूरा आदमी बन गया। तब तक उसका विवाह भी हो गया था। उसकी स्त्री जरा चिड़चिड़े स्वभाव की थी, इसलिये रूरी से उसकी पटरी नहीं बैठती थी। बुढ़िया रूरी, बहू पर शासन करने का अरमान पूरा करने की कोशिश करती और इससे सास बहू में बराबर खटपट रहती।

अकलू अबरख की खान में सब माँझियों का सरदार बन गया था। उसकी आय भी अच्छी थी। मगर हफ्ते भर की कमाई, छुट्टी के दिन पति-पत्नी मिल कर ताड़ी पीने में पूरी कर देते थे। इस बुरी आदत के लिये सोमर उसे बराबर डाँटता। अकलू उससे भिड़ पड़ता और इस प्रकार सोमर की सुखी जिन्दगी में कलह का नग्न नृत्य आरम्भ हो गया।

(१२)

एक दिन जब नशे में चूर हो लड़खड़ाती हुई अकलू की स्त्री, मतवाले और बेहोश अकलू को दो माँझियों के कन्धों पर टाँग कर घर लाई, तो सोमर से उनकी यह बर्बादी न देखी गई। उस दिन बहू को भी उसने भला

बुरा कहा। बहू भला काहे को बर्दाश्त करती, अकलू सर्दार की पत्नी जो ठहरीं। दूसरे ही दिन महाभारत छिड़ गया और अकलू तथा उसकी स्त्री ने मिल कर, सोमर और रूरी को घर से निकाल दिया। टाँड़ के अन्य माँझियों ने सोमर और रूरी की ओर से बहुत कुछ वकालत की, मगर अकलू के आगे एक भी न लगी।

अकलू को इतने ही में संतोष न हुआ और बहू के कहने पर उसने सोमर को अबरख की खान के काम से भी जवाब दिला दिया। (१३)

लाचार हो सोमर ने टाँड़ के माँझियों की सहायता से अपनी अलग झोंपड़ी तैयार कर ली और टूटे हुये दिल को लिये बुढ़ौती के दिन किसी तरह काटने लगा।

रूरी झोंपड़ी के बाहर बैठी, घण्टों ही अकलू के संबंध में नाना प्रकार की बातें सोचती रहती। उसके दिल में विचार की लहरें बड़े वेग के साथ उठती और आपस में टकरा कर अदृश्य हो जाती थीं। वह पिछली बातों को याद कर, सोचा करती कि—'अकलू के लिये उन दोनों के दिल में, कितना प्रेम है। उसके लिये उन्होंने क्या नहीं किया? शायद उसके असली माँ बाप भी उसके लिये न करते। लेकिन अकलू!··········अकलू!!'

इससे अधिक वह नहीं सोच सकती थी। उसका दिल भर आता और अकलू तथा बहूरानी के कठोर शब्द उसे याद आने लगते। दुख का वेग बढ़ने पर उसकी आँखों से आँसुओं की धारा बहने लगती। उस समय यदि अकलू दौड़ा हुआ आकर रूरी की गोद में मुँह छिपा कर, केवल इतना सा कह देता—'माँ!', इससे अधिक उसके मुँह से कुछ भी न निकलता, तो भी रूरी अपने दुख को बिलकुल भूल जाती। किन्तु इसे वह केवल स्वप्न ही समझती। क्योंकि अकलू पर बहू का जादू चढ़ा हुआ था और उससे वह माँ की ममता को बिलकुल भूल गया था।

रूरी की यह हालत देख कर, सोमर अपने दिल की कसक दिल ही में दबाये हुये, उसको आश्वासन देने की चेष्टा करता! वह कहता—'रूरी! रोती क्यों हो पगली!! यह तो भाग्य का खेल है। हमारे जैसे अभागों के लिये, क्या यही कम है कि जो भगवान ने हमारी आशा पूरी की। और बेटे बहू का मुँह देखने को मिला!'

कुँअर सुरेशसिंह ने 'दीदी' के इस अङ्क में एक कहानी लिखी है मिस सलीमा। यह कहानी हमें जरा भी पसन्द नहीं आई। फिर भी हमने इसे सहर्ष प्रकाशित किया है। कारण कि कुँअर साहब की भाषा की छटा और सुन्दर सजीव शैली का परिचय तो यह देती ही है।

× × ×

सेठ बालकृष्ण पोद्दार की कहानी बहुत ही सुन्दर है। उसमें कहानी के सब गुण मौजूद हैं। इसीलिये उसके लम्बी होने पर भी हमने उसे छापा है और कतिपय स्तम्भ कम कर देने पड़े हैं। आशा है कहानी पढ़ने के बाद पाठक इससे सहमत होंगे।

× × ×

कुमारी विद्यावती वर्मा बी० ए० की भी एक कहानी हम इस अङ्क में अन्यत्र छाप रहे हैं। कुमारी वर्मा ने अपने पिता श्री विजय वर्मा की दार्शनिक शैली का अनुकरण किया है। इस कहानी को समझने के लिये पाठकों को काफी मगज-पच्ची करनी पड़ेगी। पर विश्वास है कि उन्हें आनन्द भी मिलेगा।

× × ×

पण्डित किशोरी दास बाजपेयी ने बच्चों की पोशाक पर और श्रीमती प्रतिमा शिरूरकर ने पति कैसा हो इस विषय पर सुन्दर लेख लिखे हैं। पहला लेख स्त्रियाँ भी पढ़ सकती हैं पर दूसरा पुरुषों को खास कर विवाहितों को पढ़ना चाहिये।

× × ×

जिन्होंने 'दीदी' ग्रंथमाला की पुस्तकें मँगाने की इच्छा जाहिर की हैं उनके नाम हमने दर्ज कर लिये हैं। जैसे ही पुस्तकें निकलीं सेवा में भेजी जायँगी।

निवेदन

स्थानीय इण्डियन प्रेस से अब मेरा कोई सम्बन्ध नहीं रहा। अतएव मित्रों और परिचितों से निवेदन है कि वे मुझे निम्न पते पर पत्र आदि भेजा करें—

श्रीनाथसिंह
'दीदी कार्यालय, इलाहाबाद

विवाहित स्त्री पुरुषों के जानने योग्य!

आपरेशन तथा इन्जेक्शन जरूरी नहीं है !!

अप्राकृतिक रहन-सहन तथा मिथ्या आहार विहार के कारण हमारे देश की नारियाँ अधिकांश ऐसी मिलेंगी जो एक न एक गुप्त रोग से ग्रस्त हो निराश जीवन व्यतीत कर रही हैं। अधिकतर गर्भाशय का मोटा हो जाना तथा उस पर चर्बी आ जाना एक आम रोग हो गया है जो गर्भधारण करने में बाधक होता है तथा अन्य भयङ्कर रोगों की जिससे उतपत्ति भी होती है। ऐसी अवस्था में प्रायः ऑपरेशन कराने से भी बहुत कम रोगियों को सफलता प्राप्त होती है।

यदि आपको ऑपरेशन कराने में असुविधा है या ऑपरेशन की अपेक्षा औषधियों द्वारा कष्ट दूर करने के अधिक पक्ष में है तो शास्त्रोक्त अंगूरों का ताजा रस, अशोक, अर्जुन, दशमूल, त्रिफला तथा अन्य श्रेष्ठ औषधियों से प्रस्तुत—मूँगा जिसका प्रधान अंग है—१५ वर्षों से प्रचलित **गौड़ को नारीसुधा कार्डियल** सेवन करें।

नारीसुधा एक माहवारी से दूसरी माहवारी तक सेवन करने से बिना ऑपरेशन गर्भाशय की चर्बी, उसका मुटापा तथा निपट बांझपन नष्ट हो जाता है और सहज ही गर्भ की स्थिती हो जाती है। जहाँ इन्जेंकशन लिकोरिया (सफेदे का गिरना) रोकने में असफल होते हैं वहाँ कुछ ही खुराकों में यह सदैव के लिये ठीक हो जाता है। कमजोरी से गर्भाशय अपनी जगह से हट जाता है तथा गर्भपात होते रहते हैं। एक बोतल के सेवन से युक्त स्थान पर दृढ़ हो जाता है फिर गर्भपात कभी नहीं होते। मासिक धर्म महीने में दो बार या दो महीने में एक बार की बजाय ठीक समय पर खुल कर हँसते खेलते होने लगते हैं जिससे हिस्टीरिया (बेहोशी) के दौरे पड़ने बन्द हो जाते है। भूख खूब लगती है। खून एक बड़ी संख्या में बनने लगता है। दिल की धड़कन कमर टाँगों का ठहरा हुआ दर्द केवल चौथे दिन दूर हो जाते हैं। जापे का सङ्कट सहन करने तथा बाद की कमजोरी शीघ्र पूरी करने की यह विशेष औषधि है। **नारीसुधा** की २६ खुराकों की एक बोतल का मूल्य पेकिङ्ग वी० पी० व्यय से पृथक तीन रु० पाँच आना है। आवश्यकता होने पर इस मासिक पत्रिका का हवाला देकर

कुमार कुमार एण्ड कं० देहली से मँगाइये।

KUMAR KUMAR & Co. DELHI

तेज व बढ़िया सुगन्ध, गहरा रंग और
कम दाम इन सबने मिलकर लिपटन
की व्हाइट लेबुल को बाजार भर
की सर्वश्रेष्ठ चाय बना रक्खा है।

LIPTONS
WHITE LABEL
TEA
ONE POUND NETT
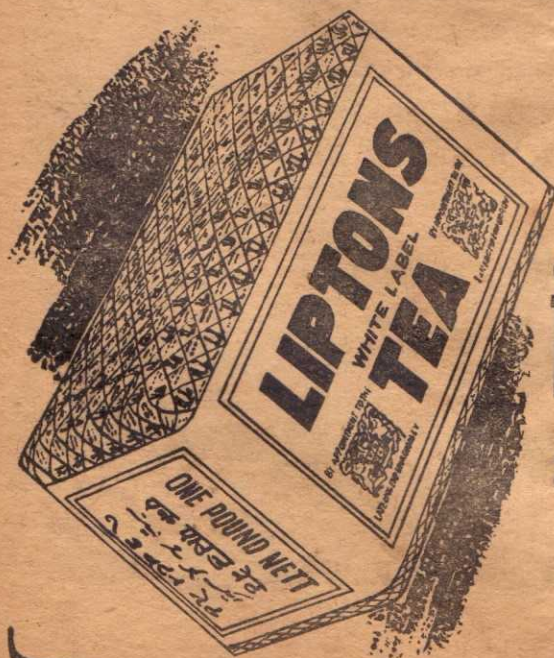
लिपटन की
व्हाइट लेबुल चाय

सर्वोत्तम भारतीय पत्ता चाय

LTK 84 W

प्यारी बहिनो

न तो मैं कोई नर्स हूँ, न कोई डाक्टर हूँ, और न वैद्यक ही जानती हूँ, बल्कि आपकी ही तरह एक गृहस्थ स्त्री हूँ। विवाह के एक वर्ष बाद दुर्भाग्य से मैं लिकोरिया [श्वेत प्रदर] और मासिक धर्म के दुष्ट रोगों में फँस गई थी। मुझे मासिकधर्म खुल कर न आता था अगर आता था तो बहुत कम और दर्द के साथ जिससे बड़ा दुःख होता था। सफेद पानी (श्वेत प्रदर) अधिक जाने के कारण मैं प्रतिदिन कमजोर होती जा रही थी. चेहरे का रङ्ग पीला पड़ गया था, घर के कामकाज से जी घबराता था, हर समय सिर चकराता, कमर दर्द करती और शरीर टूटता रहता था। मेरे पतिदेव ने मुझे सैकड़ों रुपये की मशहूर औषधियाँ सेवन कराईं; परन्तु किसी से भी रत्ती भर लाभ न हुआ। इसी प्रकार मैं लगातार दो वर्ष तक बड़ा दुःख उठाती रही। सौभाग्य से एक संन्यासी महात्मा हमारे दरवाजे पर भिक्षा के लिये आये। मैं दरवाजे पर आटा डालने आई तो महात्मा जी ने मेरा मुख देख कर कहा—बेटी, तुझे क्या रोग है जो इस आयु में ही चेहरे का रङ्ग रुई की भाँति सफेद हो गया है ? मैंने सारा हाल कह सुनाया। उन्होंने मेरे पतिदेव को अपने डेरे पर बुलाया और उनको एक नुस्खा बतलाया, जिसके केवल १५ दिन के सेवन करने से ही मेरे तमाम गुप्त रोगों का नाश हो गया। ईश्वर की कृपा से अब मैं कई बच्चों की माँ हूँ। मैंने इस नुस्खे से अपनी सैकड़ों बहिनों को अच्छा किया है और कर रही हूँ। अब मैं इस अद्भुत औषधि को अपनी दुःखी बहिनों की भलाई के लिये असल लागत पर बाँट रही हूँ। इसके द्वारा मैं लाभ उठाना नहीं चाहती क्योंकि ईश्वर ने मुझे बहुत कुछ दे रखा है।

यदि कोई बहिन इस दुष्ट रोग में फँस गई हो तो वह मुझे जरूर लिखें। मैं उनको अपने हाथ से औषधि बना कर वी० पी० पार्सल द्वारा भेज दूँगी। एक बहिन के लिये पन्द्रह दिन की दवा तैयार करने पर २॥।=) दो रुपया चौदह आने असल लागत खर्च होता है और महसूल डाक अलग है।

जरूरी सूचना - मुझे केवल स्त्रियों की इस दवा का नुस्खा मालूम है। इसलिये कोई बहिन मुझे और किसी रोग की दवा के लिये न लिखें।

प्रेमप्यारी अग्रवाल, (नं० ६०) बुढलाडा, जिला हिसार, (पञ्जाब)

सार्थक कला!

प्राचीन राजपूत चित्रकी कमनीय भावनायें हृदयमें कैसा गहरा आवेश लाती हैं। शिल्पी ने अपने चित्रमें अपना मन-प्राण सब खोकर ही इस सुकुमार भाव-विह्वलता को रंग रूप देकर सार्थक किया था। आप के प्रतिदिन के जीवन में भी इसके समान एक दृष्टान्त मिलता है—किसमें—चाय बनाने के कार्य में। एकाग्र शिल्पी की तरह दत्तचित्त होकर चाय बनाने के कार्य को सार्थक करना पड़ता है। आप केवल सुगृहिणी ही नहीं हैं, बुद्धिमती माँ भी हैं। अपनी तरह अपनी कन्या को भी गहरी आत्मीयता से चाय बनाने के कार्य को सफल बनाना सिखाइये। इसी तरह अपने पारिवारिक जीवन में चाय के आनन्द का प्रवाह बहने दीजिये।

★

चाय तैयार करने का तरीका ताजा पानी खौलाइये। साफ बर्तन जरा गर्म कर लीजिये। उसमें प्रत्येक के लिये एक और एक चम्मच अधिक, बढ़िया भारतीय चाय रखिये। पानी खौल जाते ही चाय पर डाल दीजिये। पांच मिनिटों तक चायको भीजने दीजिये। इसके बाद प्यालों में डाल कर दूध और चीनी मिलाइये।

भारतीय चाय

एकमात्र पारिवारिक पेय

इण्डियन टी मार्केट एक्सपैन्शन बोर्ड द्वारा प्रचारित

IK 201

Printed and published by Shrinath Singh at the Didi Press Katra, Allahabad.